तुलसी-रत्नावली

[गोस्वामी तुलसीदास के समस्त ग्रन्थो मे से चुने हुए
ललित पदो का संग्रह]

संकलनकर्त्ता

बाबू केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

प्रिंसिपल अग्रवाल विद्यालय इन्टरमीडियट कालेज, इलाहाबाद

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

१९४४

प्रथम बार]

[मूल्य १॥)

रामभक्तों से निवेदन

वेदमत सोधि, सोधि सोधि कै पुरान सबै,
सत औ असतन को भेद को बतावतो।
कपटी कुराही कूर कलि के कुचाली जीव,
कौन रामनामहूँ की चरचा चलावतो॥
'बेनी' कबि कहै मानो-मानो हो प्रतीति यह,
पाहन-हिये मे कौन प्रेम उपजावतो।
भारी भवसागर उतारतो कवन पार,
जो पै यह रामायन तुलसी न गावतो॥

प्रातःस्मरणीय कविकुलशिरोमणि महात्मा तुलसीदास जी के नाम से कौन परिचित नही है। श्रीरामचरितमानस ने तो उन्हे अमर बना दिया है। जैसा लोकप्रिय ग्रन्थ रामचरितमानस हुआ है वैसा अभी तक कोई दूसरा ग्रन्थ देखने मे नहीं आया है। कविवर 'रहीम' मानस की इस प्रकार प्रशसा करते है:—

रामचरितमानस बिमल, सतन जीवन प्रान।
हिन्दुआन को बेदसम, जमनहि प्रगट कुरान॥

महात्मा गाधी कहते हैं, "मैं तुलसीदास जी की रामायण को भक्ति-मार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ समझता हूँ।"

महामना प० मदनमोहन मालवीय का मत मानस के प्रति इस प्रकार है—"गोस्वामी तुलसीदास जी की मानस-रामायण ससार में अपने ढग की निराली पुस्तक है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारो वर्णों और ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासी चारो आश्रमवालो के लिए वेद, स्मृति और पुराण के उपदेशों का सारभूत यह धर्मग्रन्थ है।

इसमे ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की विमल त्रिवेणी का प्रवाह बहता है। यह असख्य प्राणियो के जीवन की सर्वस्व रही है। करोडो प्राणियो ने इसके द्वारा इच्छा के अनुकूल ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का अमृत-रस पान किया है और समय के अन्त तक करोड़ो इसके द्वारा अनुपम सुख और शान्ति पाते रहेगे। यह ग्रन्थ समस्त मनुष्य जाति को अनिर्वचनीय सुख और शान्ति पहुँचाने का साधन है।"

ससार के अन्य भाषा के विद्वानों ने भी रामायण की इसी प्रकार मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। मानव-समाज इस ग्रन्थ से बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। क्या धनी, क्या निर्धन, क्या स्त्री, क्या पुरुष सब इस ग्रन्थ को बडे चाव और उत्साह से पढते है। बहुत से सज्जन एक साथ बैठकर मधुर स्वर से इसकी चौपाइयों को झॉझ, मृदग और अन्य बाजों के साथ गाते और भगवत् भक्ति प्राप्त करते है। कहने का तात्पर्य यह कि यह सब प्राणियों का कठहार हो रही है। इसने करोडों स्त्री-पुरुषो का उत्थान किया है। इसको पढकर न मालूम कितने सज्जन ससार से विरक्त हो गये है। समाजनीति, व्यवहारनीति, राजनीति और अन्य नीतियों का यह एक अनुपम ग्रन्थ है।

विनयपत्रिका ने भी रामायण की तरह विद्वानों मे अच्छी ख्याति प्राप्त की है। इस ग्रन्थ मे कवि ने अपना हृदय निकालकर सर्व-साधारण के सामने रख दिया है। इस ग्रन्थ मे ग्रन्थकार ने जीव की कमजोरियों का बहुत ही अच्छा दिग्दर्शन कराया है। वियोगी हरि के शब्दो मे 'उनकी (तुलसी की) यह कृति ज्ञानियो की सिद्धान्त-मंजूषा है, पण्डितो की पाण्डित्य-निकाय है, योगियो की समाधि स्थली है, एवं प्रेमियो और भक्तो की मानसतरगिणी है।'

इन दो ग्रन्थ-रत्नो के अतिरिक्त उनके ग्यारह और मान्य ग्रन्थ हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—दोहावली, कवितावली, गीतावली, हनुमान-बाहुक, श्रीकृष्णगीतावली, रामाज्ञा प्रश्न, रामलला नहछू, बरवै रामायण, वैराग्यसदीपनी पार्वती मगल और जानकीमगल। ये भी सब

ग्रन्थ भक्ति, उपदेश, वैराग्य आदि उत्तमोत्तम विषयो से सम्बन्ध रखते हैं। इन सब ग्रन्थों की रचना से तुलसीदास जी ने चिरपिपासाकुल ससार-पथिको के लिए सुधा-स्रोतस्वती पुण्यसलिला राम-भक्ति-मदाकिनी की एक धवल धारा बहा दी है जिसे पाकर जनता को शान्ति मिलती है।

वर्तमान युग अशान्ति का युग है। जहाँ लोग ईश्वर-चिन्तन करते हुए निरासक्ति के साथ अपने कर्तव्य का पालन करते थे वहाँ उन्होंने अब ससार को ही अपना सर्वस्व मान रक्खा है। इस प्रकार विषयों मे और नाना प्रकार के जजालो मे फँसे हुए और जीवन भर नाना प्रकार के दुख और विषम अशान्ति सहते हुये वे इस दुर्लभ शरीर को यो ही निरर्थक गँवा देते हैं और सुख अथवा शान्ति प्राप्त करने का उनका यह प्रयास मृगजल की भाँति भ्रमात्मक सिद्ध होता है।

तो वास्तव मे सुख है कहाँ ? यह इच्छाओ मे नही है क्योंकि इच्छाये मनुष्य को क्रमशः उत्कट लोभी बनाकर पतन के गड्ढे मे ढकेल देती हैं। यह धन मे नही है और न स्त्री और पुत्रो के प्रेम मे ही है। वास्तव मे सच्चा सुख इच्छाओ के छोडने मे है। यह जनता जनार्दन की सेवा मे है। यह त्याग मे है। यह काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद और ईर्ष्या के छोड़ने मे है जिन्हे षट्विकार कहते हैं। जो षट्-विकारो को छोडता है वही सच्चा त्यागी है, वही सच्चा सन्यासी है और वही सच्चा सुखी है। गेरुआ वस्त्र पहिनकर और मूँड मुँड़ाकर सन्यासी बनने की आवश्यकता नही है। वे नररत्न धन्य हैं जो षट्विकारो को जीतकर ईश्वरचिन्तन करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करते हैं।

ऐसे समय मे जब लोग सस्कृत भाषा को भूल से गये हैं, हमे अध्यात्मज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान सबसे अधिक 'तुलसी' के ग्रन्थो से ही मिलता है। इन ग्रन्थो मे सस्कृत के सभी अच्छे अच्छे ग्रन्थो का निचोड़ आ गया है। इनको पढने से किसी भी बुद्धिमान् पुरुष को ब्रह्म-ज्ञान जो सच्चा ज्ञान है अल्प समय मे मिल सकता है।

सन् १६२६ ई० मे मुझे एक पुस्तक देखने को मिली जिसका नाम

था (Beauties of Shakespeare) शेक्सपियर रत्नावली। उसमे शेक्सपियर के सब ग्रन्थों के चुने हुए पद दिये हुए थे। उसी समय मेरे हृदय मे भी इच्छा उत्पन्न हुई कि हिन्दी मे भी इसी प्रकार की पुस्तक तुलसीदास जी के ग्रन्थो से सम्बन्ध रखनेवाली निकलती तो इससे सर्व-साधारण को और मुख्यकर उन लोगो को विशेष लाभ होता जो उनके सारे ग्रन्थो को नही पढ सकते।

यह विचार उस समय से मेरे मन मे बराबर चलता रहा। मै तुलसी के साहित्य-सागर मे डुबकियाँ लगाने लगा। सब रत्नो से अमूल्य रत्नो को धीरे धीरे सञ्चित करने लगा। सबसे पहली डुबकी रामचरित-मानस मे लगी। अपनी बुद्धि के अनुसार अमूल्य रत्नो को ढूँढा। हर एक काण्ड के ये अमूल्य रत्न शीर्षक देकर क्रमबद्ध किये गये और शीर्षक से बचे हुए रत्न सूक्तियों और स्फुटपदो मे विभाजित किये गये। इसके अनन्तर विनयपत्रिका मे डुबकी लगी और उसके भी अमूल्य रत्न निकाले गये। अन्त मे उनके और ग्रन्थो का भी अध्ययन हुआ और उनके भी सुन्दर सुन्दर रत्नों का चयन किया गया। इस प्रकार 'तुलसी-रत्नावली' तैयार हुई जिसे तुलसीदास जी के सारे ग्रन्थो का निचोड़ कहना चाहिए। कोई ऐसा पद नही चुना गया जो रोचक और उपदेशपूर्ण न हो।

रामचरितमानस का पाठ मैंने गीता प्रेस के मानसाक से लिया है और विनयपत्रिका का श्रीवियोगीहरि-द्वारा सम्पादित पुस्तक से। कवितावली का पाठ छात्रहितकारी पुस्तकमाला, प्रयाग-द्वारा प्रकाशित पुस्तक से, दोहावली का लाला भगवानदास-द्वारा सम्पादित दोहावली से, गीतावली का गीता प्रेस की गीतावली से और शेष के पाठ श्री बजरगबली-द्वारा प्रकाशित तुलसी-रचनावली से लिये गये हैं। अतएव मै इन प्रकाशको का अत्यन्त आभारी हूँ।

इस रत्नावली के तैयार करने मे मुझे अपने मित्र बा० राधेश्याम जी एम० ए०, एल-एल० बी० से बड़ी सहायता मिली है। अतएव

मैं आपका भी आभारी हूँ। आप रामायण के विशेषज्ञ हैं और उसकी टीका भी की है जो अभी तक अप्रकाशित है। आपने विनयपत्रिका और तुलसी के अन्य ग्रन्थों का भी अच्छा अध्ययन किया है।

मैं इण्डियन प्रेस, प्रयाग के जनरल मैनेजर और अध्यक्ष श्रीयुत हरिकेशव घोष जी का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन का सारा भार अपने ऊपर लेकर मुझे उत्साहित किया है। आशा है उनके द्वारा इस पुस्तक का खूब प्रचार होगा।

अन्त में नरदेह को सार्थक बनाने के लिए इस 'रत्नावली' का हमें बार बार पाठ और मनन करना चाहिए। याद रखिए—

एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। सतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि॥
जासु पतितपावन बड़ बाना। गावहि कबि श्रुति सन्त पुराना॥
ताहि भजिहि मन तजि कुटिलाई। राम भजे गति केहि नहिं पाई॥

और भी

क्षणभंगुर जीवन की कलिका, कल प्रात को जाने खिली न खिली।
मलयाचल की शुचि शीतल मंद, सुगंध समीर मिली न मिली॥
कलिकाल कुठार लिये फिरता, तनु 'नम्र' से चोट झिली न झिली।
भज ले हरिनाम अरी रसने, फिर अन्त समय में हिली न हिली॥

अग्रवाल विद्यालय कालिज,
प्रयाग
देवोत्थान एकादशी
संवत् २०००

भगवद्भक्तों का दासानुदास
केदारनाथ गुप्त

विषय-सूची

रामचरितमानस

बालकाण्ड—

अयोध्याकाण्ड—

अरण्यकाण्ड—

लंकाकाण्ड—

तुलसी-रत्नावली

बालकाण्ड

प्रार्थना

सो०—जो सुमिरत सिधि होय, गननायक करिवर बदन ।
करउ अनुग्रह सोइ, बुद्धिरासि सुभगुन सदन ॥
मूक होइ बाचाल, पगु चढइ गिरिवर गहन ।
जासु कृपा सो दयाल, द्रवउ सकल कलि-मल दहन ॥
नील सरोरुह स्याम, तरुन अरुन बारिज नयन ।
करउ सो मम उर धाम, सदा छीर सागर सयन ॥
कुन्द इन्दु सम देह, उमारमन करुना अयन ।
जाहि दीन पर नेह, करउ कृपा मर्दन मयन ॥
बदउँ गुरु पद कज, कृपासिन्धु नररूप हरि ।
महामोह तम पुज, जासु बचन रबि कर निकर ॥

बदउँ गुरुपद पदुम परागा । सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ॥
अमिय मूरिमय चूरन चारू । समन सकल भव रुज परिवारू ॥
सुकृति सभु तन बिमल बिभूती । मजुल मगल मोद प्रसूती ॥
जन मन मजु मुकुर मल हरनी । किएँ तिलक गुनगन बसकरनी ॥
श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती । सुमिरत दिव्य दृष्टि हियँ होती ॥
दलन मोह तम सो सप्रकासू । बडे भाग उर आवइ जासू ॥
उघरहि बिमल बिलोचन ही के । मिटहिं दोष दुख भव रजनी के ॥
सूझहिं रामचरित मनि मानिक । गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक ॥

संतों की वन्दना

साधुचरित सुभ सरिस कपासू । निरस बिसद गुनमय फल जासू ॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा । बंदनीय जेहिं जग जस पावा ॥
मुद मंगलमय संत समाजू । जो जग जंगम तीरथराजू ॥
रामभक्ति जहँ सुरसरिधारा । सरसइ ब्रह्मविचार प्रचारा ॥
सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग ।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग ॥
बिनु सतसङ्ग बिबेक न होई । रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ॥
संत संगत मुद मंगल मूला । सोइ फल सिधि सब साधन फूला ॥
सठ सुधरहिं सत संगति पाई । पारस परस कुधात सुहाई ॥
बिधिबस सुजन कुसंगत परहीं । फनिमनि सम निजगुन अनुसरहीं ॥
बंदउँ संत समानचित, हित अनहित नहिं कोइ ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोइ ॥

असंतों की वन्दना

बहुरि बंदि खलगन सतिभाएँ । जे बिनु काज दाहिनेहु बाएँ ॥
परहित हानि लाभ जिन्ह केरें । उजरें हरष बिषाद बसेरें ॥
हरिहर जस राकेस राहु से । पर अकाज भट सहसबाहु से ॥
जे परदोष लखहिं सहसाखी । परहित घृत जिन्ह के मन माखी ॥
तेज कृसानु रोष महिषेसा । अघ अवगुन धन धनी धनेसा ॥
उदय केत सम हित सबही के । कुम्भकरन सम सोवत नीके ॥

संतों और असंतो के लक्षण

बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं । मिलत एक दुख दारुन देहीं ॥
उपजहि एक संग जग माहीं । जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं ॥

सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू॥
भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुजस अपलोक बिभूती॥
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलिमल-सरि ब्याधू॥
गुन अवगुन जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई॥

भलो भलाइहि पै लहइ, लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरताँ, गरल सराहिअ मीचु॥

नाम वन्दना

बंदउँ नाम राम रघुबर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को॥
बिधि हरि हरमय बेद प्रान सो। अगुन अनूपम गुननिधान सो॥
महामंत्र जोइ जपत महेसू। कासीं मुकुति हेतु उपदेसू॥
महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नामप्रभाऊ॥
जान आदिकबि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू॥
सहस नाम सम सुनि सिव बानी। जपति सदा पिय संग भवानी॥
हरषे हेतु हेरि हर ही को। किय भूषन तियभूषन ती को॥
नाम प्रभाउ जानि सिव नीको। कालकूट फलु दीन्ह अमी को॥

बरषा रितु रघुपति भगति, तुलसी सालि सुदास।
रामनाम बर बरन जुग, सावन भादव मास॥

आखर मधुर मनोहर दोऊ। बरन बिलोचन जन जिय जोऊ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निबाहू॥
नर नारायन सरिस सुभ्राता। जगपालक बिसेषि जनत्राता॥
भगति सुतिय कल करन बिभूषन। जगहित हेतु बिमल बिधु पूषन॥
स्वाद तोष सम सुगति सुधा के। कमठ सेष सम धर बसुधा के॥
जन मन मंजु कंज मधुकर से। जीह जसोमति हरि हलधर से॥

एक छत्रु एकु मुकुट मनि, सब बरननि पर जोउ।
तुलसी रघुबर नाम के, बरन बिराजत दोउ॥
रामनाम मनिदीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरेहुँ, जौं चाहसि उजिआर॥

राम और नाम की महिमा

निरगुन तें एहि भाँति बड, नाम प्रभाउ अपार।
कहउँ नामु बड़ राम तें, निज बिचार अनुसार॥
राम भगत हित नरतनु धारी। सहि संकट किए साधु सुखारी॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भगत होंहि मुद मङ्गल बासा॥
राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥
रिषि हित राम सुकेतु सुता की। सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी॥
सहित दोष दुख दास दुरासा। दलइ नामु जिमि रवि निसि नासा॥
भजेउ राम आपु भव चापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू॥
दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किए पावन॥
निसिचर निकर दले रघुनन्दन। नामु सकल कलि कलुष निकन्दन॥
सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल, बेद बिदित गुनगाथ॥
राम सुकंठ बिभीषन दोऊ। राखे सरन जान सब कोऊ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे। लोक बेद बर बिरिद बिराजे॥
राम भालु कपि कटक बटोरा। सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा॥
नाम लेत भव सिन्धु सुखाही। करहु बिचारु सुजन मन माही॥
राम सकुल रन रावनु मारा। सीय सहित निज पुर पगु धारा॥
राजा राम अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनि बर बानी॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। बिनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती॥

संग और कुसंग का प्रभाव

लखि सुवेष जग बञ्चक जेऊ। बेष प्रताप पूजिअहि तेऊ॥
उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू॥
किएहुँ कुबेषु साधु सनमानू। जिमि जग जामवन्त हनुमानू॥
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू॥
गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीच जल संगा॥
साधु असाधु सदन सुक सारी। सुमिरहिं राम देहिं गनि गारी॥
धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई॥
सोइ जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवनदाता॥

ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग॥
सम प्रकास तम पाख दुहुँ, नाम भेद बिधि कीन्ह।
ससि सोषक पोषक समुझि, जग जस अपजस दीन्ह॥

जीव की एकता

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभबासी॥
सीयराममय सब जग जानी। करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

यथास्थान सबकी शोभा

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी॥
नृप किरीट तरुनी तनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥

रामचरित्र महिमा

रामचरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू॥
जगमंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के॥

सदगुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के ॥
जननि जनक सिय राम प्रेम के। बीज सकल ब्रत धरम नेम के ॥
समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के ॥
सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ उदधि अपार के ॥
काम कोह कलिमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के ॥
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के ॥
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के ॥
हरन मोह तम दिनकर कर से। सेवक सालि पाल जलधर से ॥
अभिमत दानि देवतरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरिहर से ॥
सुकबि सरद नभ मन उडगन से। राम भगत जन जीवन धन से ॥
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधु लोग से ॥
सेवक मन मानस मराल से। पावन गंग तरंग माल से ॥

कुपथ कुतरक कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि, इंधन अनल प्रचंड ॥
रामचरित राकेस कर, सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित बिसेषि बड़ लाहु ॥

रामचरितमानस महिमा

रामचरितमानस यहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा ॥
मन करि बिषय अनल बन जरई। होइ सुखी जौं एहिं सर परई ॥
रामचरितमानस मुनिभावन। बिरचेउ संभु सुहावन पावन ॥
त्रिबिध दोष दुख दारिद दावन। कलि कुचालि कुलि कलुष नसावन ॥
सप्त प्रबंध सुभग सोपाना। ग्यान नयन निरखत मन माना ॥
रघुपति महिमा अगुन अबाधा। बरनब सोइ बर बारि अगाधा ॥
रामसीय जस सलिल सुधासम। उपमा बीचि बिलास मनोरम ॥

पुरइनि सघन चारु चौपाई । जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई ॥
छंद सोरठा सुन्दर दोहा । सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा ॥
अरथ अनूप सुभाव सुभासा । सोइ पराग मकरंद सुबासा ॥
सुकृत पुंज मंजुल अलि माला । ग्यान बिराग बिचार मराला ॥
धुनि अवरेब कबित गुन जाती । मीन मनोहर ते बहुभाँती ॥
अरथ धरम कामादिक चारी । कहब ग्यान बिग्यान बिचारी ॥
नव रस जप तप जोग बिरागा । ते सब जलचर चारु तडागा ॥
सुकृती साधु नाम गुन गाना । ते बिचित्र जल बिहग समाना ॥
संत सभा चहुँ दिसि अवँराई । श्रद्धा रितु बसंत सम गाई ॥
भगति निरूपन बिबिध बिधाना । छमा दया दम लता बिताना ॥
सम जम नियम फूल फल ग्याना । हरिपद रति रस बेद बखाना ॥
औरउ कथा अनेक प्रसंगा । तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा ॥

पुलक बाटिका बाग बन, सुख सुबिहंग बिहारु ।
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु ॥

रामायण किसे नहीं सोहाती

अति खल जे बिषई बग कागा । एहि सर निकट न जाहिं अभागा ॥
संबुक भेक सेवार समाना । इहाँ न बिषय कथा रस नाना ॥
तेहि कारन आवत हियँ हारे । कामी काक बलाक बिचारे ॥
आवत एहि सर अति कठिनाई । रामकृपा बिनु आइ न जाई ॥
कठिन कुसंग कुपंथ कराला । तिन्ह के बचन बाघ हरि ब्याला ॥
गृहकारज नाना जंजाला । ते अति दुर्गम सैल बिसाला ॥
बन बहु बिषम मोह मद माना । नदीं कुतर्क भयंकर नाना ॥

जे श्रद्धा संबल रहित, नहि संतन्ह कर साथ ।
तिन्ह कहुँ मानस अगम अति, जिन्हहि न प्रिय रघुनाथ ॥

जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई । जातहिं नींद जुड़ाई होई ॥
जड़ता जाड़ बिषम उर लागा । गएहुँ न मज्जन पाव अभागा ॥
करि न जाइ सर मज्जन पाना । फिरि आवइ समेत अभिमाना ॥
जौ बहोरि कोइ पूछन आवा । सर निन्दा करि ताहि बुझावा ॥
सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही । राम सुकृपा बिलोकहिं जेही ॥
ते नर यह सर तजहिं न काऊ । जिन्ह के राम चरन भल भाऊ ॥
जो नहाइ चह एहिं सर भाई । सो सतसग करउ मन लाई ॥

तीर्थराज प्रयाग का स्नान

माघ मकरगत रबि जब होई । तीरथपतिहिं आव सब कोई ॥
देव दनुज किन्नर नर श्रेनी । सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी ॥
पूजहिं माधव पद जलजाता । परसि अखयबटु हरषहिं गाता ॥
भरद्वाज आश्रम अतिपावन । परम रम्य मुनिबर मनभावन ॥
तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा । जाहिं जे मज्जन तीरथराजा ॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा । कहहिं परसपर हरिगुनगाहा ॥
ब्रह्मनिरूपन धरम बिधि, बरनहिं तत्व बिभाग ।
कहहिं भगति भगवत कै, सजुत ग्यान बिराग ॥

तपस्या की महिमा

तपबल रचइ प्रपचु बिधाता । तपबल बिष्नु सकल जग त्राता ।
तपबल संभु करहि सघारा । तपबल सेषु धरइ महिभारा ॥

कामदेव का प्रताप

अस कहि चलेउ सबहि सिरु नाई । सुमन धनुष कर सहित सहाई ॥
चलत मार अस हृदयँ बिचारा । सिवबिरोध ध्रुव मरनु हमारा ॥

तब आपन प्रभाउ बिस्तारा। निजबस कीन्ह सकल ससारा ॥
कोपेउ जबहि बारिचर केतू। छन महँ मिटे सकल श्रुतिसेतू ॥
ब्रह्मचर्ज ब्रत सजम नाना। धीरज धरम ग्यान बिग्याना ॥
सदाचार जप जोग बिरागा। सभय बिबेक कटकु सबु भागा ॥

भागेउ बिबेकु सहाय सहित सो सुभट सजुग महि मुरे ।
सदग्रंथ पर्वतकदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे ॥
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा ।
दुइ माथ केहि रतिनाथ जेहि कहुँ कोपि कर धनु सरु धरा ॥

जे सजीव जग अचर चर, नारि पुरुष अस नाम ।
ते निज निज मरजाद तजि, भए सकल बस काम ॥

सबके हृदयँ मदन अभिलाषा। लता निहारि नवहिं तरुसाखा ॥
नदी उमगि अबुधि कहुँ धाई। सगम करहिं तलाव तलाई ॥
जहँ असि दसा जड़न्ह कै बरनी। को कहि सकइ सचेतन करनी ॥
पसु पच्छी नभ जल थलचारी। भए कामबस समय बिसारी ॥
मदन अध ब्याकुल सब लोका। निसि दिनु नहि अवलोकहि कोका ॥
देव दनुज नर किंनर ब्याला। प्रेत पिसाच भूत बेताला ॥
इन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी। सदा काम के चेरे जानी ॥
सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी। तेपि कामबस भए बियोगी ॥

भए कामबस जोगीस तापस पावँरन्हि की को कहे ।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे ॥
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामय ।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अय ॥

धरी न काहूँ धीर, सब के मन मनसिज हरे ।
जे राखे रघुबीर, ते उबरे तेहि काल महुँ ॥

ब्रह्मा का लिखा अमिट होता है

जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी। बोली जुत बिबेक मृदु बानी॥
अस बिचारि सोचहि मति माता। सो न टरइ जो रचइ बिधाता॥
करम लिखा जौं बाउर नाहू। तौ कत दोसु लगाइअ काहू॥
तुम्ह सन मिटहि कि बिधि के अंका। मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका॥

शिव और राम की समानता

सिव पद कमल जिन्हहि रति नाहीं। रामहि ते सपनेहुँ न सोहाहीं॥
बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू। राम भगत कर लच्छन एहू॥

शिव स्वरूप वर्णन

चरित सिन्धु गिरिजा रमन, बेद न पावहिं पारु।
बरनै तुलसी दासु किमि, अति मतिमन्द गँवारु॥
कुन्द इन्दु दर गौर शरीरा। भुज प्रलम्ब परिधन मुनि चीरा॥
तरुन अरुन अंवुज सम चरना। नख दुति भगत हृदय तम हरना॥
भुजग भूति भूषन त्रिपुरारी। आननु सरद चंद छबि हारी॥
जटा मुकुट सुरसरित सिर, लोचन नलिन बिसाल।
नीलकंठ लावन्यनिधि, सोह बाल बिधु भाल॥

राम विमुख लोगों की दुर्दशा

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवन रंध्र अहिभवन समाना॥
नयनन्हि संत दरस नहिं देखा। लोचन मोरपंख कर लेखा॥
ते सिर कटु तुंबरि समतूला। जे न नमत हरि गुर पद मूला॥
जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहि आनी। जीवत सब समान तेइ प्रानी॥
जो नहि करइ राम गुन गाना। जीह सो दादुर जीह समाना॥
कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती। सुनि हरिचरित न जो हरषाती॥

रामकथा की महिमा

रामकथा सुन्दर करतारी। ससय बिहग उड़ावनिहारी॥
रामकथा कलि बिटप कुठारी। सादर सुनु गिरिराज कुमारी॥
रामनाम गुन चरित सुहाए। जनम करम अगनित श्रुति गाए॥
जथा अनन्त राम भगवाना। तथा कथा कीरति गुन नाना॥
बुध बिश्राम सकल जनरंजनि। रामकथा कलि कलुष बिभंजनि॥
रामकथा कलि पन्नग भरनी। पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी॥
रामकथा कलि कामद गाई। सुजन सजीवनि मूरि सुहाई॥
सोइ बसुधा तल सुधा तरंगिनि। भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि॥
असुर सेन सम नरक निकंदिनि। साधु बिबुध कुल हित गिरि नंदिनि॥
संत समाज पयोधि रमा सी। बिस्व भार भर अचल छमा सी॥
जम गन मुँह मसि जग जमुना सी। जीवन मुकुति हेतु जनु कासी॥
रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी। तुलसिदास हित हियँ हुलसी सी॥
सिव प्रिय मेकल सैल सुता सी। सकल सिद्धि सुख संपति रासी॥
सदगुन सुरगन अंब अदिति सी। रघुबर भगति प्रेम परमिति सी॥

रामकथा मंदाकिनी, चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु॥
राम कथा सुरधेनु सम, सेवत सब सुखदानि।
संत समाज सुरलोक सब, को न सुनै अस जानि॥

शिव जी राम के प्यारे हैं।

जपहु जाइ सङ्कर सत नामा। होइहि तुरत हृदय बिश्रामा॥
कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरे। अस परतीति तजहु जनि भोरे॥
जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सो न पाव मुनि भगति हमारी॥

अज्ञानियों की दशा

जिन्ह के अगुन न सगुन बिबेका। जल्पहि कल्पित बचन अनेका॥
हरिमाया बस जगत भ्रमाही। तिन्हहि कहत कछु अघटित नाही॥
बातुल भूतबिबस मतवारे। ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे॥
जिन्ह कृत महामोह मद पाना। तिन्हकर कहा करिअ नहिं काना॥

सगुन और निर्गुण ब्रह्म की समता

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुधि बेदा॥
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥
जो गुनरहित सगुन सोइ कैसे। जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे॥
जासु नाम भ्रम तिमिर पतगा। तेहि किमि कहिअ बिमोह प्रसगा॥
राम सच्चिदानन्द दिनेसा। नहिं तहँ मोहनिसा लवलेसा॥
सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि बिग्यान बिहाना॥
हरष विषाद ग्यान अग्याना। जीव धर्म अहमिति अभिमाना॥
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानद परेस पुराना॥

पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि, प्रगट परावरनाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ, कहि सिवँ नायउ माथ॥

निज भ्रम नहि समुझहिं अग्यानी। प्रभु पर मोह धरहि जड़ प्रानी॥
जथा गगन घनपटल निहारी। झाँपेउ भानु कहहि कुबिचारी॥
चितव जो लोचन अगुलि लाएँ। प्रगट जुगल ससि तेहि के भाएँ॥
उमा रामबिषइक अस मोहा। नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा॥
बिषयकरन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता॥
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई॥
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू॥
जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया॥

रजत सीप महुँ भास जिमि, जथा भानुकर बारि ।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ, भ्रम न सकइ कोउ टारि ॥
जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई । गिरिजा सोइ कृपाल रघुराई ॥
आदि अंत कोउ जासु न पावा । मति अनुमानि निगम अस गावा ॥
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना । कर बिनु करम करइ बिधि नाना ॥
आनन रहित सकल रस भोगी । बिनु बानी बकता बड जोगी ॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा । ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा ॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी । महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥
जेहि इमि गावहि बेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान ।
सोइ दसरथसुत भगत हित, कोसलपति भगवान ॥

ईश्वर अवतार कब लेते हैं

जब जब होइ धरम कै हानी । बाढहि असुर अधम अभिमानी ॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी । सीदहि बिप्र धेनु सुर धरनी ॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा । हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा ॥
असुर मारि थापहि सुरन्ह, राखहि निज श्रुति सेतु ।
जग बिस्तारहि बिसद जस, रामजन्म कर हेतु ॥

बसंत ऋतु का वर्णन

कुसुमित बिबिध बिटप बहुरंगा । कूजहिं कोकिल गुंजहि भृंगा ॥
चली सुहावनि त्रिबिध बयारी । काम कृसानु बढावनिहारी ॥
रंभादिक सुरनारि नबीना । सकल असमसर कला प्रबीना ॥
करहिं गान बहु तान तरंगा । बहुबिधि क्रीड़हि पानि पतंगा ॥

स्वायंभू मनु और सतरूपा को भगवद्दर्शन

नील सरोरुह नील मनि, नील नीरधर स्याम ।
लाजहिं तनु सोभा निरखि, कोटि कोटि सत काम ॥

सरद मयक बदन छबि सीवा। चारु कपोल चिवुक दर ग्रीवा ॥
अधर अरुन रद सुन्दर नासा। बिधुकर निकर बिनिंदक हासा ॥
नव अबुज अबक छबि नीकी। चितवनि ललित भावँती जी की ॥
भृकुटि मनोज चाप छबि हारी। तिलक ललाट पटल दुति कारी ॥
कुडल मकर मुकुट सिर भ्राजा। कुटिल केस जनु मधुप समाजा ॥
उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला। पदिक हार भूषन मनिजाला ॥
केहरि कधर चारु जनेऊ। बाहु बिभूषन सुन्दर तेऊ ॥
करि कर सरिस सुभग भुजदडा। कटि निषग कर सर कोदडा ॥

तडित बिनिदक पीतपट, उदर रेख बर तीनि।
नाभि मनोहर लेति जनु, जमुन भँवर छबि छीनि ॥

पद राजीव बरनि नहि जाही। मुनि मन मधुप बसहिं जेन्ह माही ॥
बाम भाग सोभति अनुकूला। आदि सक्ति छबि निधि जगमूला ॥
जासु अस उपजहि गुन खानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी ॥
भृकुटि विलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई ॥

बड़े सहज ही कृपालु होते हैं

बड़े सनेह लघुन्ह पर करही। गिरि निज सिरनि सदा तृन धरही ॥
जलधि अगाध मौलि वह फेनू। सतत धरनि धरत सिर रेनू ॥

ईश्वर प्रेम से पैदा होते हैं

हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मै जाना ॥
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥
अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी ॥

राम-जन्म और उनका स्वरूप

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप बिचारी ॥

लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निजआयुध भुजचारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुनग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥
करुना सुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीरमति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुन गो पार॥

रामचन्द्र जी का बाल-स्वरूप

ब्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन बिगत बिनोद।
सो अज प्रेम भगतिबस, कौसल्या कें गोद॥

काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा॥
अरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती॥

रेख कुलिस ध्वज अकुस सोहे । नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहे ॥
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा । नाभि गभीर जानि जेहिं देखा ॥
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी । हियँ हरि नख अति सोभा रूरी ॥
उर मनिहार पदिक की सोभा । बिप्र चरन देखत मन लोभा ॥
कबु कठ अति चिबुक सुहाई । आनन अमित मदन छबि छाई ॥
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे । नासा तिलक को बरनै पारे ॥
सुंदर श्रवन सुचारु कपोला । अति प्रिय मधुर तोतरे बोला ॥
(नील कमल दोउ नयन बिसाला । बिकट भृकुटि लटकन बरभाला ॥)
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे । बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥
पीत झगुलिआ तनु पहिराई । जानु पानि बिचरनि मोहि भाई ॥
रूप सकहि नहिं कहि श्रुति सेषा । सो जानइ सपनेहुँ जेहि देखा ॥

सुख सन्दोह मोहपर, ग्यान गिरा गोतीत ।
दपति परम प्रेम बस, कर सिसु चरित पुनीत ॥

चारों भाइयों का नामकरन

नामकरन कर अवसरु जानी । भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी ॥
करि पूजा भूपति अस भाषा । धरिय नाम जो मुनि गुनि राखा ॥
इन्ह के नाम अनेक अनूपा । मै नृप कहब स्वमति अनुरूपा ॥
जो आनन्द सिन्धु सुख रासी । सीकर तें त्रैलोक सुपासी ॥
सो सुख धाम राम अस नामा । अखिल लोक दायक बिश्रामा ॥
बिस्व भरन पोषन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई ॥
जाके सुमिरन तें रिपु नासा । नाम सत्रुहन बेद प्रकासा ॥

लच्छन धाम राम प्रिय, सकल जगत आधार ।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा, लछिमन नाम उदार ॥

धरे नाम गुरु हृदयँ बिचारी। बेद तत्व नृप तव सुत चारी॥
मुनि धन जन सरबस सिव प्राना। बाल केलि रस तेंहि सुख माना॥

जनकपुर की शोभा

पुर रम्यता राम जब देखी। हरषे अनुज समेत बिसेखी॥
बापी कूप सरित सर नाना। सलिल सुधासम मनिसोपाना॥
गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा। कूजत कल बहुबरन बिहंगा॥
बरन बरन बिकसे बनजाता। त्रिबिध समीर सदा सुखदाता॥

सुमनबाटिका बाग बन, बिपुल बिहग निवास।
फूलत फलत सुपल्लवत, सोहत पुर चहुँ पास॥

बनइ न बरनत नगर निकाई। जहाँ जाइ मन तहँइँ लोभाई॥
चारु बजारु बिचित्र अँबारी। मनिमय बिधि जनु स्वकर सँवारी॥
धनिक बनिक बर धनद समाना। बैठे सकल बस्तु लै नाना॥
चौहट सुंदर गली सुहाई। सतत रहहिं सुगंध सिंचाई॥
मंगलमय मंदिर सब केरे। चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे॥
पुर नर नारि सुभग सुचि संता। धरमसील ग्यानी गुनवंता॥
अति अनूप जहँ जनकनिवासू। बिथकहिं बिबुध बिलोकि बिलासू॥
होत चकित चित कोट बिलोकी। सकल भुवन सोभा जनु रोकी॥

धवल धाम मनि पुरट पट, सुघटित नाना भाँति।
सियनिवास सुंदर सदन, सोभा किमि कहि जाति॥

भूप बागु बर देखेउ जाई। जहँ बसंत रितु रही लोभाई॥
लागे बिटप मनोहर नाना। बरन बरन बर बेलि बिताना॥
नव पल्लव फल सुमन सुहाए। निज संपति सुर रूख लजाए॥
चातक कोकिल कीर चकोरा। कूजत बिहग नटत कल मोरा॥

मध्य बाग सरु सोह सुहावा । मनिसोपान बिचित्र बनावा ॥
बिमल सलिलु सरसिज बहुरंगा । जलखग कूजत गुंजत भृंगा ॥

बागु तड़ागु बिलोकि प्रभु, हरषे बंधु समेत ।
परम रम्य आरामु यहु, जो रामहि सुख देत ॥

पार्वती जी की प्रार्थना

जय जय गिरिबरराज किसोरी । जय महेस मुख चंद चकोरी ॥
जय गजबदन षडानन माता । जगत जननि दामिनि दुति गाता ॥
नहिं तव आदि मध्य अवसाना । अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना ॥
भव भव बिभव पराभव कारिनि । बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि ॥

पतिदेवता सुतीय महुँ, मातु प्रथम तव रेख ।
महिमा अमित न सकहिं कहि, सहस सारदा सेष ॥

सेवत तोहिं सुलभ फल चारी । बरदायनी पुरारि पिआरी ॥
देबि पूजि पदकमल तुम्हारे । सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे ॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें । बसहु सदा उर पुर सबही कें ॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं । अस कहि चरन गहे बैदेहीं ॥

श्रीचरण-महिमा

जे पदसरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं
जे सुकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलिमल भाजहीं ॥
जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई ।
मकरंदु जिन्ह को संभु सिर सुचिता अवधि सुर बरनई ॥
करि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहैं ।
ते पद पखारत भाग्यभाजनु जनकु जय जय सब कहैं ॥

राम का विराट-स्वरूप

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभुमूरति तिन्ह देखी तैसी॥
देखहिं रूप महा रनधीरा। मनहुँ बीररसु धरें सरीरा॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी॥
रहे असुर छल छोनिपबेषा। तिन्ह प्रभु प्रगट कालसम देखा॥
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई। नरभूषन लोचन सुखदाई॥

नारि बिलोकहिं हरषि हियँ, निज निज रुचि अनुरूप।
जनु सोहत सिंगार धरि, मूरति परम अनूप॥

बिदुषन प्रभु बिराटमय दीसा। बहु मुख कर पग लोचन सीसा॥
जनक जाति अवलोकहिं कैसें। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसें॥
सहित बिदेह बिलोकहिं रानी। सिसु सम प्रीति न जाति बखानी॥
जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा। सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा॥
हरिभगतन्ह देखे दोउ भ्राता। इष्टदेव इव सब सुखदाता॥
रामहि चितव भायँ जेहि सीया। सो सनेह सुखु नहि कथनीया॥

सीता जो की अपार सुन्दरता

जो पटतरिय तीय सम सीया। जग असि जुबति कहाँ कमनीया॥
गिरा मुखर तन अरध भवानी। रति अति दुखित अतनु पति जानी॥
बिष बारुनी बंधु प्रिय जेही। कहिअ रमासम किमि बैदेही॥
जो छबि सुधा पयोनिधि होई। परम रूपमय कच्छपु सोई॥
सोभा रजु मंदरु सिंगारू। मथै पानिपंकज निज मारू॥

एहि बिधि उपजै लच्छि जब, सुंदरता सुख मूल।
तदपि सकोच समेत कबि, कहहिं सीय समतूल॥

छोटी वस्तुओं के चमत्कार

कहँ कुम्भज कहँ सिंधु अपारा। सोषेउ सुजसु सकल संसारा॥
रविमंडल देखत लघु लागा। उदय तासु त्रिभुवन तम भागा॥
मंत्र परम लघु जासु बस, बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ, बस कर अंकुस खर्ब॥

समय चूकने से हानि

तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुएँ करइ का सुधातड़ागा॥
का बरषा सब कृषी सुखानें। समय चुकें पुनि का पछितानें॥

शुभ सगुन के लक्षण

बनइ न बरनत बनी बराता। होहिं सगुन सुंदर सुभदाता॥
चारा चाषु बाम दिसि लेई। मनहुँ सकल मंगल कहि देई॥
दाहिन काग सुखेत सुहावा। नकुलदरसु सब काहूँ पावा॥
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बरनारी॥

सूक्तियाँ

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढावै साखा॥

जलु पय सरिस बिकाइ, देखहु प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रसु जाइ, कपट खटाई परत पुनि॥

नहिं कोउ अस जनमा जगमाहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं॥

जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा। जाइअ बिनु बोलेहुँ न सँदेहा॥
तदपि बिरोध मान जहँ कोई। तहाँ गएँ कल्यानु न होई॥

जद्यपि जग दारुन दुख नाना। सब तें कठिन जाति अवमाना॥

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी॥
गुर के बचन प्रतीति न जेही। सपनेहुँ सुगम न सुख सिधि तेही॥

महादेव अवगुन भवन, बिष्नु सकल गुन धाम।
जेहि कर मनु रम जाहि सन, तेहि तेही सन काम॥

परहित लागि तजइ जो देही। सतत संत प्रसंसहि तेही॥

जे कामी लोलुप जग माहीं। कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं॥

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई॥

अति प्रचंड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया॥

सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहिं, भजिअ महामाया पतिहि॥

तुलसी जस भवतव्यता, तैसी मिलइ सहाइ।
आपुनु आवइ ताहि पहिं, ताहि तहाँ लै जाइ॥

तुलसी देखि सुबेषु, भूलहिं मूढ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु, बचन सुधासम असन अहि॥

रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुख रबि ससिहि, सिर अवसेषित राहु॥

भरद्वाज मुनु जाहि जब, होइ बिधाता बाम।
धूरि मेरु सम जनक जम, ताहि ब्याल सम दाम॥

अस प्रभु दीन बन्धु हरि, कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ तेहि भजु, छाड़ि कपट जजाल॥

जिन्ह कै लहहि न रिपु रन पीठी। नहिं पावहिं परतिय मनु डीठी॥
मगन लहहिं न जिन्ह कै नाही। ते नर बर थोरे जग माहीं॥

जेहि कै जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु सदेहू॥

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रतापु॥

जो लरिका कछु अचगरि करही। गुर पितु मातु मोद मन भरही॥

टेढ़ जानि सब बंदइ काहू। बक्र चद्रमहि ग्रसइ न राहू॥

भइ जग बिदित दच्छ गति सोई। जस कछु संभु बिमुख की होई॥

कबहूँ जोग बियोग न जाकें। देखा प्रगट बिरह दुख ताकें॥

अति विचित्र रघुपति चरित, जानहिं परम सुजान।
जे मतिमन्द बिमोह बस, हृदयँ धरहिं कछु आन॥

सीम कि चापि सकै कोउ तासू। बड़ रखवार रमापति जासू॥

सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना। सोइ सर्वग्य राम भगवाना॥

जासु कथा कुंभज रिषि गाई। भगति जासु मै मुनिहि सुनाई॥
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा॥

सत सभु श्रीपति अपबादा। सुनिय जहाँ तहँ असि मरजादा॥
काटिय तासु जीभ जो बसाई। श्रवन मूँदि न त चलिअ पराई॥

फुटकर

निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरैं जननी हठि धावा॥

जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता। ते जन बंचित किये बिधाता॥

जाकी सहज स्वास श्रुति चारी। सो हरि पढ यह कौतुक भारी॥

ब्यापक अकल अनीह अज, निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना बिधि, करत चरित्र अनूप॥

ग्यान बिराग सकल गुन अयना। सो प्रभु मै देखब भरि नयना॥

प्रभु ब्रह्मन्य देव मै जाना। मोहि निति पिता तजेउ भगवाना॥

तब रिषि निज नाथहि जिय चीन्ही। बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही॥

सुन्दर स्याम गौर दोउ भ्राता। आनँद हू के आनँद दाता॥
इन्ह कै प्रीति परस्पर पावनि। कहि न जाइ मन भाव सुहावनि॥

धाये धाम काम सब त्यागी। मनहुँ रंक निधि लूटन लागी॥

सिव सम को रघुपति ब्रतधारी। बिनु अघ तजी सती असि नारी॥
पनु करि रघुपति भगति देखाई। को सिव सम रामहिं प्रिय भाई॥

इच्छित फल बिनु सिव अवराधे। लहइ न कोटि जोग जप साधे॥

बिवसहुँ जासु नाम नर कहही। जन्म अनेक रचित अघ दहही॥
सादर सुमिरन जे नर करही। भव बारिधि गोपद इव तरही॥

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मगल दिसि दसहूँ॥

बोले बिहँसि महेस तब, ग्यानी मूढ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहि जब, सो तस तेहि छन होइ॥

सुनु मुनि मोह होइ मन ताके। ग्यान बिराग हृदय नहि जाके॥

हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता। कहहिं सुनहिं बहु बिधि सब सता॥

सुत बिषयक तव पद रति होऊ। मोहिं बरु मूढ कहै किन कोऊ॥
मणि बिनु फणि जिमि जल बिनु मीना। मम जीवन तिमि तुमहि अधीना॥

प्रभु जानत सब बिनहिं जनाये। कहहु कवन सिधि लोक रिझाये॥

योग युक्ति तप मन्त्र प्रभाऊ। फलै तबहिं जब करिय दुराऊ॥

जाकर नाम सुनत सुभ होई। मोरे गृह आवा प्रभु सोई॥

यह सब चरित जान पै सोई। कृपा राम की जापर होई॥

जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी। तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी॥

रघुपति बिमुख जतन कर कोरी। कवन सकै भव बन्धन छोरी॥

मन क्रम बचन अगोचर जोई। दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई॥

वय किसोर सुखमा सदन, स्याम गौर सुख धाम।
अंग अंग पर वारिअहिं, कोटि कोटि सत काम॥

कहहु सखी अस को तनुधारी। जो न मोह यह रूप निहारी॥

सखि हमरें आरति अति ताते। कबहुँक ए आवहिं एहि नाते॥

नाहिंत हम कहुँ सुनहु सखि, इन्ह कर दरसनु दूरि।
यह सघट्ट तब होइ जब, पुन्य पुराकृत भूरि॥

लव निमेष महँ भुवन निकाया। रचै जासु अनुसासन माया॥
भगति हेतु सोइ दीनदयाला। चितवत चकित धनुष मखसाला॥

जिन्ह के चरन सरोरुह लागी। करत बिबिध जप जोग बिरागी॥
तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते। गुरु पद कमल पलोटत प्रीते॥

जासु त्रास डर कहुँ डर होई। भजन प्रभाव दिखावत सोई॥

स्याम गौर किमि कहौ बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी॥

बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू। अवसि देखिये देखनजोगू॥

लखन कहा जस भाजनु सोई । नाथ कृपा तव जापर होई ॥

करहु जाइ जा कहुँ जोइ भावा । हम तौ आजु जनम फलु पावा ॥

डगइ न सभु सरासन कैसे । कामी बचन सती मनु जैसे ॥

सब नृप भये जोग उपहासी । जैसे बिनु बिराग सन्यासी ॥

सोहति सीय राम कै जोरी । छबि सिंगारु मनहुँ एक ठौरी ॥

हमहि तुमहि सरवरि कसि नाथा । कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा ॥

बिप्र बस कै असि प्रभुताई । अभय होइ जो तुमहि डेराई ॥

जिन्ह के जस प्रताप के आगे । ससि मलीन रबि सीनल लागे ॥
तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे । देखिय रबि कि दीप कर लीन्हे ॥

जिमि सरिता सागर महुँ जाही । जद्यपि ताहि कामना नाही ॥
तिमि सुख सपति बिनहिं बुलाये । धर्म सील पहिं जाहिं सुभाये ॥

मगल सगुन सुगम सब ताकें । सगुन ब्रह्म सुन्दर सुत जाकें ॥

जिन्ह कर नाम लेत जग माहीं । सकल अमगल मूल नसाही ॥
करतल होहिं पदारथ चारी । ते सिय रामु कहेउ कामारी ॥

मै कछु कहउँ एक बल मोरें । तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरें ॥

बार बार मागउँ कर जोरे । मनु परिहरै चरन जनि भोरे ॥

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मै तोरा॥

मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥

मोरे हित हरि सम नहि कोऊ। यहि अवसर सहाय सो होऊ॥

जो अनाथ हित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू॥
जो सरूप बस सिब मन माही। जेहि कारन मुनि जतन कराहीं॥
जो भुसुण्डि मन मानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा॥
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन। कृपा करहु प्रनतारति मोचन॥

अयोध्याकाण्ड

भक्त की इच्छा

जेहि जेहि जोनि करम बस भ्रमही। तहँ तहँ ईसु देउ यह हमही॥
सेवक हम स्वामी सियनाहू। होउ नात यह ओर निबाहू॥

कामदेव की शक्ति

सुरपति बसइ बाँहबल जाकें। नरपति सकल रहहिं रुख ताकें॥
सो सुनि तियरिस गयउ सुखाई। देखहु काम प्रताप बड़ाई॥
सूल कुलिस असि अँगवनिहारे। ते रतिनाथ सुमन सर मारे॥

पितृभक्त पुत्र की अवस्था

धन्य जनमु जगतीतल तासू। पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू॥
चारि पदारथ करतल ताकें। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें॥

स्त्री की प्रबलता

सत्य कहहिं कबि नारिसुभाऊ। सब बिधि अगहु अगाध दुराऊ॥
निज प्रतिबिंबु बरुकु गहि जाई। जानि न जाइ नारिगति भाई॥

काह न पावकु जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥

पुरनारियों का कैकई को समझाना

बिप्रबधू कुलमान्य जठेरी। जे प्रिय परम केकई केरी॥
लगीं देन सिख सीलु सराही। बचन बान सम लागहिं ताही॥

भरतु न मोहि प्रिय राम समाना। सदा कहहु यहु सबु जगु जाना॥
करहु राम पर सहज सनेहू। केहि अपराध आज बन देहू॥
कबहुँ न कियहु सवति आरेसू। प्रीति प्रतीति जान सबु देसू॥
कौसल्याँ अब काह बिगारा। तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा॥

सीय कि पिय सँग परिहरिहि, लखनु कि रहिहहि धाम।
राज कि भूजब भरत पुर, नृपु कि जियहि बिनु राम॥

असि बिचारि उर छाड़हु कोहू। सोक कलक कोठि जनि होहू॥
भरतहि अवसि देहु जुवराजू। कानन काह राम कर काजू॥
नाहिन रामु राज के भूखे। धर्म धुरीन बिषय रस रूखे॥
गुरगृह बसहु राम तजि गेहू। नृप सन अस बरु दूसर लेहू॥
जौं नहिं लगिहहु कहें हमारे। नहि लागिहि कछु हाथ तुम्हारे॥
जौं परिहास कीन्ह कछु होई। तौ कहि प्रगट जनावहु सोई॥
राम सरिस सुत कानन जोगू। काह कहिहि सुनि तुम्ह कहुँ लोगू॥
उठहु बेगि सोइ करहु उपाई। जेहि बिधि सोकु कलकु नसाई॥

जेहि भाँति सोकु कलकु जाइ उपाय करि कुल पालही।
हठि फेरु रामहि जात बन जनि बात दूसरि चालही॥
जिमि भानु बिनु दिनु प्रान बिनु तनु चन्द बिनु जिमि जामिनी।
तिमि अवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझ धौं जिय भामिनी॥

सास का पुत्रबधू पर प्रेम

मै पुनि पुत्रबधू प्रिय पाई। रूपरासि गुन सील सुहाई॥
नयन पुतरि करि प्रीति बढाई। राखेउँ प्रान जानकिहि लाई॥
कलपबेलि जिमि बहुबिधि लाली। सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली॥
फूलत फलत भयउ बिधि बामा। जानि न जाइ काह परिनामा॥

पलँग पीठि तजि गोद हिंडोरा । सियँ न दीन्ह पगु अवनि कठोरा ॥
जिअनमूरि जिमि जोगवत रहऊँ । दीप बाति नहिं टारन कहऊँ ॥

बन के लिए कौन स्त्रियाँ चाहिए

बन हित कोल किरात किसोरी । रची बिरचि बिषयसुख भोरी ॥
पाहनकृमि जिमि कठिन सुभाऊ । तिन्हहि कलेसु न कानन काऊ ॥
कै तापस तिय कानन जोगू । जिन्ह तप हेतु तजा सब भोगू ॥
सिय बन बसिहि तात केहि भाँती । चित्रलिखित कपि देखि डराती ॥
सुरसर सुभग बनज बनचारी । डाबर जोगु कि हंसकुमारी ॥

राम जी की सीता जी को शिक्षा

राजकुमारि सिखावनु सुनहू । आन भाँति जियँ जनि कछु गुनहू ॥
आपन मोर नीक जौं चहहू । बचनु हमार मानि गृह रहहू ॥
आयसु मोर सासु सेवकाई । सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥
एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ॥
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी । होइहि प्रेम बिकल मति भोरी ॥
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुंदरि समझायहु मृदुबानी ॥
कहउँ सुभायँ सपथ सत मोही । सुमुखि मातु हित राखउँ तोही ॥

गुर श्रुति संमत धरम फलु, पाइअ बिनहिं कलेस ।
हठ बस सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस ॥

मैं पुनि करि प्रवान पितु बानी । बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥
दिवस जात नहिं लागिहि बारा । सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा ॥
जौं हठ करहु प्रेम बस बामा । तौ तुम्ह दुखु पाउब परिनामा ॥
काननु कठिन भयंकरु भारी । घोर घामु हिम बारि बयारी ॥
कुस कंटक मग काँकर नाना । चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥

कंदर खोह नदीं नद नारे। अगम अगाध न जाहिं निहारे॥
भालु बाघ बृक केहरि नागा। करहिं नाद सुनि धीरजु भागा॥

भूमि सयन बलकल बसन, असनु कंद फल मूल।
ते कि सदा सब दिन मिलहि, सबुइ समय अनुकूल॥

नर अहार रजनीचर चरहीं। कपटबेष बिधि कोटिक करहीं॥
लागइ अति पहार कर पानी। बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी॥
ब्याल कराल बिहग बन घोरा। निसिचर निकर नारि नर चोरा॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आएँ। मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाएँ॥
हंसगवनि तुम्ह नहिं बनजोगू। सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू॥
मानस सलिल सुधाँ प्रतिपाली। जिअइ कि लवनपयोधि मराली॥
नव रसाल बन बिहरनसीला। सोह कि कोकिल बिपिन करीला॥
रहहु भवन अस हृदयँ बिचारी। चंदबदनि दुखु कानन भारी॥

सहज सुहृद गुर स्वामि सिख, जो न करइ सिर मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित हानि॥

पति ही स्त्री का सर्वस्व है

प्राननाथ करुनायतन, सुंदर सुखद सुजान।
तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु, सुरपुर नरक समान॥

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई। प्रिय परिवारु सुहृद समुदाई॥
सासु ससुर गुर सजन सहाई। सुत सुंदर सुसील सुखदाई॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिनु तियहि तरनि ते ताते॥
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू। पति बिहीन सबु सोक समाजू॥
भोग रोगसम भूषन भारू। जम जातना सरिस संसारू॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जगमाहीं। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं॥

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारें। सरद बिमल बिधु बदनु निहारें॥

खग मृग परिजन नगरु बनु, बलकल बिमल दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम, परनसाल सुखमूल॥

बनदेवी बनदेव उदारा। करिहहिं सासु ससुर सम सारा॥
कुस किसलय साथरी सुहाई। प्रभु सँग मंजु मनोज तुराई॥
कंद मूल फल अमिअ अहारू। अवध सौंध सत सरिस पहारू॥
छिनु छिनु प्रभु पद कमल बिलोकी। रहिहउँ मुदित दिवस जिमि कोकी॥
बन दुख नाथ कहे बहुतेरे। भय बिषाद परिताप घनेरे॥
प्रभु बियोग लवलेस समाना। सब मिलि होहिं न कृपा निधाना॥
अस जियँ जानि सुजानसिरोमनि। लेइअ संग मोहि छाडिअ जनि॥
बिनती बहुत करौं का स्वामी। करुनामय उर अंतरजामी॥

राखिअ अवध जो अवधि लगि, रहत न जनिअहि प्रान।
दीनबंधु सुंदर सुखद, सील सनेह निधान॥

मोहि मग चलत न होइहि हारी। छिनु छिनु चरनसरोज निहारी॥
सबहि भाँति पिय सेवा करिहौं। मारग जनित सकल श्रम हरिहौं॥
पाय पखारि बैठि तरु छाहीं। करिहउँ बाउ मुदित मन माहीं॥
श्रमकन सहित स्याम तनु देखें। कहँ दुख समउ प्रानपति पेखें॥
सम महि तृन तरु पल्लव डासी। पाय पलोटिहि सब निसि दासी॥
बार बार मृदु मूरति जोही। लागिहि तात बयारि न मोही॥
को प्रभु सँग मोहि चितवनहारा। सिंघबधुहि जिमि ससक सियारा॥

राम जी का लक्ष्मण को उपदेश

तात प्रेमबस जनि कदराहू। समुझि हृदयँ परिनाम उछाहू॥

मातु पिता गुरु स्वामि सिख, सिर धरि करहि सुभायँ ।
लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर, नतरु जनमु जग जायँ ॥

अस जिय जानि सुनहु सिख भाई । करहु मातु पितु पद सेवकाई ॥
भवन भरत रिपुसूदन नाही । राउ वृद्ध मम दुखु मन माही ॥
मै बन जाउँ तुम्हहि लेइ साथा । होइ सबहि बिधि अवध अनाथा ॥
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू । सब कहुँ परइ दुसह दुखभारू ॥
रहहु करहु सब कर परितोषू । नतरु तात होइहि बड़ दोषू ॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृपु अवसि नरक अधिकारी ॥

सुमित्रा का लक्ष्मण जी को उपदेश

धीरजु धरेउ कुअवसर जानी । सहज सुहृद बोली मृदुबानी ॥
तात तुम्हारि मातु बैदेही । पिता रामु सब भाँति सनेही ॥
अवध तहाँ जहँ राम निवासू । तहँइँ दिवसु जहँ भानुप्रकासू ॥
जौं पै सीय रामु बन जाही । अवध तुम्हार काजु कछु नाही ॥
गुरु पितु मातु बंधु सुर साईं । सेइअहि सकल प्रान की नाईं ॥
रामु प्रानप्रिय जीवन जी के । स्वारथ रहित सखा सबही के ॥
पूजनीय प्रिय परम जहाँ तें । सब मानिअहि राम के नातें ॥
अस जियँ जानि संग बन जाहू । लेहु तात जग जीवन लाहू ॥

भूरि भाग भाजनु भयहु, मोहि समेत बलि जाउँ ।
जौं तुम्हरें मन छाडि छलु, कीन्ह रामपद ठाउँ ॥

पुत्रवती जुबती जग सोई । रघुपति भगतु जासु सुतु होई ॥
नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी । राम बिमुख सुत तें हित जानी ॥
तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाही । दूसर हेतु तात कछु नाही ॥
सकल सुकृत कर बड फलु एहू । राम सीय पद सहज सनेहू ॥

रागु रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्ह के बस होहू॥
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई॥
तुम्ह कहुँ बन सब भाँति सुपासू। सँग पितु मातु रामु सिय जासू॥
जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू। सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू॥

उपदेसु यहु जेहिं तात तुम्हरें राम सिय सुख पावहीं।
पितु मातु प्रिय परिवार पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं॥
तुलसी प्रभुहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिस दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय रघुबीर पद नित नित नई॥

राम का माता-पिता के प्रति प्रेम

सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जेहि तें रहै भुआल सुखारी॥

मातु सकल मोरे बिरहँ, जेहिं न होहिं दुखदीन।
सोइ उपाउ तुम्ह करहु सब, पुरजन परम प्रबीन॥

संसार की निर्मूलता

काहु न कोउ सुख दुखकर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रमफंदा॥
जनमु मरनु जहँ लगि जगजालू। संपति बिपति करमु अरु कालू॥
धरनि धामु धनु पुर परिवारू। सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू॥
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं॥

सपनें होइ भिखारि नृपु, रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु, तिमि प्रपंच जियँ जोइ॥

अस बिचारि नहिं कीजिअ रोसू। काहुहि बादि न देइअ दोसू॥
मोह निसाँ सबु सोवनिहारा। देखिय सपन अनेक प्रकारा॥
एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी॥
जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा॥

होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा॥
सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू॥

धर्म के लिए संकट सहना

सिबि दधीच हरिचंद नरेसा। सहे धरम हित कोटि कलेसा॥
रतिदेव बलि भूप सुजाना। धरमु धरेउ सहि संकट नाना॥
संभावित कहुँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू॥

बिना पति के सब ऐश्वर्य्य निरर्थक है

पितु बैभव बिलास मैं डीठा। नृप मनि मुकुट मिलित पद पीठा॥
सुखनिधान अस पितु गृह मोरें। पिय बिहीन मन भाव न भोरें॥
ससुर चक्कवइ कोसलराऊ। भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ॥
आगें होइ जेहि सुरपति लेई। अरध सिंघासन आसनु देई॥
ससुर एतादृस अवध निवासू। प्रिय परिवारु मातु सम सासू॥
बिनु रघुपति पद पदुम परागा। मोहि केउ सपनेहुँ सुखद न लागा॥
अगम पंथ बनभूमि पहारा। करि केहरि सर सरित अपारा॥
कोल किरात कुरंग बिहंगा। मोहि सब सुखद प्रानपति संगा॥

केवट का श्रीराम के चरण धोने का विनोद

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनिघरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पदपदुम पखारन कहहू॥

केवट का सौभाग्य

जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा॥
सोइ कृपालु केवटहिं निहोरा। जेहिं जगु किय तिहुँ पगहु ते थोरा॥
बरसि सुमन सुर सकल सिहाहीं। एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं॥

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि, मुदित गयउ लेइ पार॥

उतरि ठाढ़ भये सुरसरि रेता। सीय रामु गुह लखन समेता॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच यहि नहिं कछु दीन्हा॥
पिय हिय की सिय जाननि हारी। मनि मुदरी मन मुदित उतारी॥
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई॥
नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोस दुख दारिद दावा॥
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी। आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी॥
अब कछु नाथ न चाहिय मोरे। दीन दयाल अनुग्रह तोरे॥
फिरती बार मोहि जो देबा। सो प्रसादु मैं सिर धरि लेबा॥

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ, नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन, भगति बिमल बर देइ॥

तीरथराज प्रयाग का वर्णन

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी। माधव सरिस मीतु हितकारी॥
चारि पदारथ भरा भंडारू। पुन्य प्रदेस देस अति चारू॥
छेत्रु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा। सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा॥
सेन सकल तीरथ बर बीरा। कलुष अनीक दलन रनधीरा॥
संगमु सिंहासन सुठि सोहा। छत्रु अखयबटु मुनि मनु मोहा॥
चवँर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा॥

सेवहि सुकृती साधु सुचि, पावहिं सब मनकाम।
बन्दी बेद पुरान गन, कहहि बिमल गुनग्राम॥

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुञ्ज कुञ्जर मृगराऊ॥

भरद्वाज का राम जी के प्रभाव का वर्णन

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जप जोग बिरागू॥
सफल सकल सुभ साधन साजू। राम तुम्हहि अवलोकत आजू॥
लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी। तुम्हरे दरस आस सब पूजी॥
अब करि कृपा देहु बर एहू। निज पद सरसिज सहज सनेहू॥

करम बचन मन छाडि छलु, जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं, किएँ कोटि उपचार॥

भगवान के रहने का स्थान

बालमीकि हँसि कहहि बहोरी। बानी मधुर अमिअ रस बोरी॥
सुनहु राम अब कहउँ निकेता। जहाँ बसहु सिय लखन समेता॥
जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहि निरन्तर होहि न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहि दरस जलधर अभिलाषे॥
निदरहि सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहि सुखारी॥
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक। बसहु बन्धु सिय सह रघुनायक॥

जसु तुम्हार मानस बिमल, हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुनगन चुनइ, राम बसहु हियँ तासु॥

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा॥
तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं॥

सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय बिसेखी ॥
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा ॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
मन्त्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा ॥
तरपन होम करहि बिधि नाना। बिप्र जेंवाइ देहि बहु दाना ॥
तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी। सकल भायँ सेवहिं सनमानी ॥

सबु करि मागहिं एक फल, रामचरन रति होउ।
तिन्ह के मन मन्दिर बसहु, सिय रघुनदन दोउ ॥

काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ॥
सब के प्रिय सब के हितकारी। दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी ॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी ॥
तुम्हहि छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
जननी सम जानहिं पर नारी। धनु पराव बिष ते बिष भारी ॥
जे हरषहिं पर संपति देखी। दुखित होहिं पर बिपत बिसेखी ॥
जिन्हहिं राम तुम प्रान पियारे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे ॥

स्वामि सखा पितु मातु गुर, जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मन्दिर तिन्ह के बसहु, सीय सहित दोउ भ्रात ॥

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं। बिप्र धेनु हित संकट सहहीं ॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्हकर मनु नीका ॥
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा ॥
राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही ॥
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई ॥
सब तजि तुम्हहिं रहइ उर लाई। तेहि कें हृदयँ रहहु रघुराई ॥

सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना॥
करम बचन मन राउर चेरा। राम करहु तेहि कें उर डेरा॥

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु, तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरन्तर तासु मन, सो राउर निज गेहु॥

चित्रकूट का वर्णन

चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू॥
सैलु सुहावन कानन चारू। करि केहरि मृग बिहग बिहारू॥
नदी पुनीत पुरान बखानी। अत्रि प्रिया निज तप बल आनी॥
सुरसरिधार नाउँ मदाकिनि। जो सब पातक पोतक डाकिनि॥
अत्रि आदि मुनिवर बहु बसही। करहिं जोग जप तप तन कसहीं॥
चलहु सफल श्रम सब कर करहू। राम देहु गौरव गिरिबरहू॥

राम के वियोग में घोड़ों को दुख

चरफराहिं मग चलहि न घोरे। बन मृग मनहुँ आनि रथ जोरे॥
अढुकि परहिं फिरि हेरहि पीछें। राम बियोगि बिकल दुख तीछें॥
जो कह रामु लखनु बैदेही। हिकरि हिकरि हित हेरहि तेही॥
बाजि बिरह गति कहि किमि जाती। बिनु मनि फनिक बिकल जेहि भाँती॥
(जासु बियोग बिकल पशु ऐसे। प्रजा मातु पितु जीवहिं कैसे॥)

धीर पुरुष का लक्षण

जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभु प्रिय मिलन बियोगा॥
काल करम बस होहिं गुसांई। बरबस रात दिवस की नाई॥
सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाही। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं॥

भरत जी का केकई को धिक्कारना

जो पै कुरुचि रही अति तोही । जनमत काहे न मारे मोही ॥
पेड़ काटि तैं पालउ सींचा । मीन जिअन निति बारि उलीचा ॥
हंसबंसु दसरथु जनक, राम लखन से भाइ ।
जननी तूँ जननी भई, बिधि सन कछु न बसाइ ॥
जब तैं कुमति कुमत जिय ठयऊ । खंड खंड होइ हृदय न गयऊ ॥
बर माँगत मन भइ नहि पीरा । गरि न जीह मुँह परेउ न कीरा ॥
भूपँ प्रतीति तोरि किमि कीन्ही । मरन काल बिधि मति हरि लीन्ही ॥
बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी । सकल कपट अघ अवगुन खानी ॥

भरत जी कौशिल्या जी को सफाई देते हैं

जे अघ मातु पिता सुत मारें । गाइ गोठ महि सुरपुर जारें ॥
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें । मीत महीपति माहुर दीन्हें ॥
जे पातक उपपातक अहहीं । करम बचन मन भव कबि कहहीं ॥
ते पातक मोहि होहुँ बिधाता । जौं यहु होइ मोर मत माता ॥
जे परिहरि हरि हर चरन, भजहि भूतगन घोर ।
तेहि कइ गति मोहि देउ बिधि, जौं जननी मत मोर ॥
बेचहि बेदु धरमु दुहि लेहीं । पिसुन पराय पाप कहि देहीं ॥
कपटी कुटिल कलह प्रिय क्रोधी । बेद बिदूषक बिस्व बिरोधी ॥
लोभी लम्पट लोलुप चारा । जे ताकहि पर धनु पर दारा ॥
पावौं मैं तिन्ह कै गति घोरा । जौं जननी यहु संमत मोरा ॥
जे नहिं साधु संग अनुरागे । परमारथ पथ बिमुख अभागे ॥
जे न भजहिं हरि नर तनु पाई । जिन्हहि न हरिहर सुजसु सोहाई ॥
तजि श्रुति पथु बाम पथ चलहीं । बञ्चक बिरचि बेष जगु छलहीं ॥
तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ । जननी जौं यहु जानौं भेऊ ॥

सोचने योग्य कौन है

सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलख कहेहु मुनि नाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु, जसु अपजसु बिधि हाथ॥

अस बिचारि केहि देइअ दोसू। व्यरथ काहि पर कीजिअ रोसू॥
तात बिचारु करहु मन माही। सोच जोगु दसरथु नृपु नाही॥
सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय लयलीना॥
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना॥
सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू॥
सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी॥
सोचिअ पुनि पति बंचक नारी। कुटिल कलह प्रिय इच्छा चारी॥
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहि गुरु आयसु अनुसरई॥

सोचिअ गृही जो मोह बस, करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंचरत, बिगत बिबेक बिराग॥

बैखानस सोइ सोचै जोगू। तपु बिहाइ जेहि भावइ भोगू॥
सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुर बंधु बिरोधी॥
सब बिधि सोचिय पर अपकारी। निज तनु पोषक निरदय भारी॥
सोचनीय सबही बिधि सोई। जो न छाँड़ि छलु हरिजन होई॥

पिता के वचनों को पालन करना

परसुराम पितु अग्या राखी। मारी मातु लोक सब साखी॥
तनय जजातिहि जौबनु दयऊ। पितु अग्या अघ अजसु न भयऊ॥

अनुचित उचित बिचारु तजि, जे पालहि पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहि अमरपति ऐन॥

भरत का राम के प्रति प्रेम व संसार को रामभक्ति की शिक्षा

मोहि उपदेसु दीन्ह गुर नीका। प्रजा सचिव समत सबही का ॥
मातु उचित धरि आयसु दीन्हा। अवसि सीस धरि चाहउँ कीन्हा ॥
गुर पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी ॥
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू ॥
तुम्ह तौ देहु सरल सिख सोई। जो आचरत मोर भल होई ॥
जद्यपि यह समुझत हउँ नीकें। तदपि होत परितोषु न जी कें ॥
अब तुम्ह बिनय मोरि सुनि लेहू। मोहि अनुहरत सिखावन देहू ॥
ऊतरु देउँ छमब अपराधू। दुखित दोष गुन गनहिं न साधू ॥

पितु सुरपुर सियरामु बन, करन कहहु मोहि राजु।
एहि तें जानहु मोर हित, कै आपन बड़ काजु ॥

हित हमार सियपति सेवकाई। सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाई ॥
मैं अनुमानि दीख मन माहीं। आन उपायँ मोर हित नाहीं ॥
सोक समाजु राजु केहि लेखें। लखन राम सिय बिनु पद देखें ॥
बादि बसन बिनु भूषन भारू। बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू ॥
सरुज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जायँ जप जोगा ॥
जायँ जीव बिनु देह सुहाई। बादि मोर सबु बिनु रघुराई ॥
जाउँ राम पहिं आयसु देहू। एकहिं आँक मोर हित एहू ॥
मोहि नृप करि भल आपन चहहू। सोउ सनेह जड़ता बस कहहू ॥

कैकेई सुअ कुटिल मति, राम बिमुख गत लाज।
तुम्ह चाहत सुखु मोह बस, मोहि से अधम के राज ॥

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू। चाहिअ धरमसील नरनाहू ॥
मोहि राजु हठि देइहहु जबहीं। रसा रसातल जाइहि तबही ॥

मोहि समान को पाप निवासू। जेहि लगि सीय राम बनबासू॥
रायँ राम कहुँ काननु दीन्हा। बिछुरत गमनु अमरपुर कीन्हा॥
मै सठु सब अनरथ कर हेतू। बैठ बात सब सुनउँ सचेतू॥
बिनु रघुबीर बिलोकि अबासू। रहे प्रान सहि जग उपहासू॥
राम पुनीत बिषय रस रूखे। लोलुप भूमि भोग के भूखे॥
कहँ लगि कहौं हृदय कठिनाई। निदरि कुलिसु जेहिं लही बड़ाई॥

कारन तें कारजु कठिन, होइ दोसु नहि मोर।
कुलिस अस्थि तें उपल तें, लोह कराल कठोर॥

कैकेई भव तनु अनुरागे। पावँर प्रान अघाइ अभागे॥
जौं प्रिय बिरहँ प्रान प्रिय लागे। देखब सुनब बहुत अब आगे॥
लखन राम सिय कहुँ बनु दीन्हा। पठइ अमरपुर पति हित कीन्हा॥
लीन्ह बिधवपन अपजसु आपू। दीन्हेउ प्रजहि सोक सतापू॥
मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू। कीन्ह कैकई सब कर काजू॥
एहि तें मोर काह अब नीका। तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका॥
कैकइ जठर जनमि जग माहीं। यह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं॥
मोरि बात सब बिधिहिं बनाई। प्रजा पाँच कत करहु सहाई॥

ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछी मार।
तेहि पिआइअ बारुनी, कहहु काह उपचार॥

सत्संगति का फल

करमनास जलु सुरसरि परई। तेहि को कहहु सीस नहि धरई॥
उलटा नाम जपत जगु जाना। बालमीकि भए ब्रह्म समाना॥

स्वपच सबर खस जमन जड़, पावँर कोल किरात।
रामु कहत पावन परम, होत भुवन बिख्यात॥

भरत की भक्ति की महिमा

कियें जाहि छाया जलद, सुखद बहइ बर बात।
तसु मगु भयउ न राम कहँ, जस भा भरतहि जात॥

जड़ चेतन मग जीव घनेरे। जे चितये प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे॥
ते सब भये परम पद जोगू। भरत दरस मेटा भव रोगू॥
यह बड़ि बात भरत कइ नाहीं। सुमिरत जिनहि राम मन माहीं॥
बारक राम कहत जग जेऊ। होत तरन तारन नर तेऊ॥
भरत राम प्रिय पुनि लघु भ्राता। कस न होइ मगु मंगल दाता॥

रामचन्द्र जी का स्वभाव

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ। निज अपराध रिसाहि न काऊ॥
जो अपराधु भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई॥
लोकहुँ बेद बिदित इतिहासा। यह महिमा जानहि दुरबासा॥
जद्यपि सम नहि राग न रोषू। गहहि न पाप पूनु गुन दोषू॥
करम प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥
राम सदा सेवक रुचि राखी। बेद पुरान साधु सुर साखी॥
अस जियँ जानि तजहु कुटिलाई। करहु भरत पद प्रीति सुहाई॥

राम भगत परहित निरत, पर दुख दुखी दयाल।
भगत सिरोमनि भरत तें, जनि डरपहु सुरपाल॥

राजमद का नशा

भरतहि दोसु देइ को जाएँ। जग बौराइ राजपदु पाएँ॥

ससि गुर तियगामी नहुषु, चढेउ भूमिसुर जान।
लोक बेद तें बिमुख भा, अधम न बेन समान॥

सहसबाहु सुरनाथु त्रिसकू। केहि न राजमद दीन्ह कलंकू॥

काम में जल्दी न करना चाहिये

अनुचित उचित काजु किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सबु कोऊ॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं॥
कही तात तुम्ह नीति सुहाई। सब तें कठिन राजमदु भाई॥
जो अचवँत नृप मातहिं तेई। नाहिन साधु सभा जेहिं सेई॥

भरतहि होइ न राजमदु, बिधि हरिहर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि, छीर सिंधु बिनसाइ॥

भरत की प्रशंसा

सगुनु खीरु अवगुन जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता॥
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा॥
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥

राम शैल की शोभा

भरत दीख बन सैल समाजू। मुदित छुधित जनु पाइ सुनाजू॥
ईति भीति जनु प्रजा दुखारी। त्रिबिध ताप पीड़ित ग्रह मारी॥
जाइ सुराज सुदेस सुखारी। होहिं भरत गति तेहि अनुहारी॥
रामबास बन संपति भ्राजा। सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा॥
सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू। बिपिन सुहावन पावन देसू॥
भट जम नियम सैल रजधानी। सांति सुमति सुचि सुन्दर रानी॥
सकल अंग संपन्न सुराऊ। राम चरन आश्रित चित चाऊ॥

जीति मोह महिपालु दल, सहित बिबेक सुआलु।
करत अकंटक राजुपुरँ, सुख संपदा सुकालु॥

बन प्रदेस मुनि बास घनेरे। जनु पुर नगर गाउँ गन खेरे॥
बिपुल बिचित्र बिहग मृग नाना। प्रजा समाजु न जाइ बखाना॥

खगहा करि हरि बाघ बराहा। देखि महिष वृष साजु सराहा॥
बयरु बिहाइ चरहिं एक संगा। जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा॥
झरना झरहिं मत्त गज गाजहिं। मनहुँ निसान बिबिध बिधि बाजहिं॥
चक चकोर चातक सुक पिक गन। कूजत मंजु मराल मुदित मन॥
अलिगन गावत नाचत मोरा। जनु सुराज मङ्गल चहुँ ओरा॥
बेलि बिटप तृन सफल सफूला। सब समाजु मुद मङ्गल मूला॥

राम सैल सोभा निरखि, भरत हृदयँ अति पेमु।
तापस तप फलु पाइ जिमि, सुखी सिरानें नेमु॥

लक्ष्मण जी की कर्तव्यनिष्ठा

बचन सपेम लखन पहिचाने। करत प्रनामु भरत जियँ जाने॥
बन्धु सनेह सरस एहिं ओरा। उत साहिब सेवा बस जोरा॥
मिलि न जाइ नहि गुदरत बनई। सुकवि लखन मन की गति भनई॥
रहे राखि सेवा पर भारू। चढ़ी चङ्ग जनु खैंच खेलारू॥

राम जी की सर्वव्यापकता

सानुज मिलि पल महुँ सब काहू। कीन्ह दूरि दुख दारुन दाहू॥
यह बड़ि बात राम कै नाहीं। जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं॥

भरत जी की प्रशंसा

नाथ सपथ पितु चरन दुहाई। भयउ न भुवन भरत सम भाई॥
जे गुरु पद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुँ बेदहुँ बड़ भागी॥
राउर जा पर अस अनुरागू। को कहि सकइ भरत कर भागू॥

भरत का पश्चात्ताप

जिनहि निरखि मग सांपिनि बीछी। तजहिं बिषम बिषु तामस तीछी॥

तेइ रघुनन्दनु लखनु सिय, अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख, दैउ सहावै काहि॥

राम का भरत को आश्वासन

तात जायँ जियँ करहु गलानी। ईस अधीन जीव गति जानी॥
तीनि काल तिभुअन मत मोरें। पुन्यसि लोक तात तर तोरे॥
उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई। जाइ लोकु परलोकु नसाई॥
दोसु देहि जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहि सेई॥

मिटिहहिं पाप प्रपच सब, अखिल अमङ्गल भार।
लोक सुजसु परलोक सुखु, सुमिरत नामु तुम्हार॥

प्रेम और बैर सब जानते हैं

मुनिगन निकट बिहग मृग जाही। बाधक बधिक बिलोकि पराही॥
हित अनहित पसु पच्छिउ जाना। मानुष तनु गुन ग्यान निधाना॥

सेवक का कर्तव्य

जो सेवकु साहिबहि सँकोची। निज हित चहइ तासु मति पोची॥
सेवक हित साहिब सेवकाई। करै सकल सुख लोभ बिहाई॥
उतरु देइ सुनि स्वामि रजाई। सो सेवकु लखि लाज लजाई॥

बिना राम प्रेम के सब व्यर्थ है

सो सुखु करमु धरमु जरि जाऊ। जहँ न राम पद पङ्कज भाऊ॥
जोगु कुजोगु ग्यान अग्यानू। जहँ नहिं राम पेम परधानू॥

किसका जीवन व्यर्थ है !

साधु समाज न जाकर लेखा। राम भगत महुँ जासु न रेखा॥
जायँ जियत जग सो महि भारू। जननी जौवन बिटप कुठारू॥

भगवत प्रेम की महिमा

जासु ग्यानु रबि भव निसि नासा। बचन किरन मुनि कमल बिकासा॥
तेहि कि मोह ममता निअराई। यह सिय राम सनेह बड़ाई॥
बिषई साधक सिद्ध सयाने। त्रिबिध जीव जग बेद बखाने॥
राम सनेह सरस मन जासू। साधु सभाँ बड़ आदर तासू॥
सोह न राम पेम बिनु ग्यानू। करनधार बिनु जिमि जल जानू॥

मुखिया कैसा होना चाहिए

मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक॥

रामचन्द्रजी की चरण पादुका

चरन पीठ करुना निधान के। जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के॥
सपुट भरत सनेह रतन के। आखर जुग जनु जीव जतन के॥
कुल कपाट कर कुसल करम के। बिमल नयन सेवा सुधरम के॥
भरत मुदित अवलब लहे तें। अस सुख जस सिय रामु रहे तें॥

भरत जी की तपस्या

तेहिं पुर बसत भरत बिनु रागा। चचरीक जिमि चपक बागा॥
रमा बिलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़ भागी॥

राम पेम भाजन भरतु, बड़े न एहिं करतूति।
चातक हस सराहिअत, टेंक बिबेक बिभूति॥

देह दिनहुँ दिन दूबरि होई। घटइ तेजु बलु मुख छबि सोई॥
नित नव राम प्रेम पनु पीना। बढ़त धरम दलु मनु न मलीना॥
जिमि जलु निघटत सरद प्रकासे। बिलसत बेतस बनज बिकासे॥
सम दम सजम नियम उपासा। नखत भरत हिय बिमल अकासा॥

धुव बिस्वासु अवधि राका सी। स्वामि सुरति सुरबीथि बिकासी॥
रामपेम बिधु अचल अदोषा। सहित समाज सोह नित चोखा॥
भरत रहनि समुझनि करतूती। भगति बिरति गुन बिमल बिभूती॥
बरनत सकल सुकबि सकुचाही। सेस गनेस गिरा गमु नाही॥

नित पूजत प्रभु पाँवरी, प्रीति न हृदय समाति।
मागि मागि आयसु करति, राजकाज बहु भाँति॥

भरत जी का आचरण

परम पुनीत भरत आचरनू। मधुर मजु मुद मगल करनू॥
हरन कठिन कलि कलुष कलेसू। महामोह निसि दलन दिनेसू॥
पाप पुंज कुंजर मृगराजू। समन सकल सताप समाजू॥
जन रजन भजन भवभारू। रामसनेह सुधाकर सारू॥

सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनिमन अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को॥
दुख दाह दारिद दंभ दूषन सुजसु मिस अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सनमुख करत को॥

सूक्तियाँ

ऊँच निवासु नीचि करतूती। देखि न सकहिं पराइ बिभूती॥

हमहुँ कहबि अब ठकुर सोहाती। नाहिं त मौन रहब दिनु राती॥

कोउ नृप होउ हमहि का हानी। चेरि छाड़ि अब होब कि रानी॥

रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समय फिरें रिपु होहिं पिरीते॥

अरिबस दैउ जिआवत जाही । मरनु नीक तेहि जीवन चाही ॥

को न कुसगति पाइ नसाई । रहइ न नीच मतें चतुराई ॥

रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई ॥

नहि असत्य सम पातक पुंजा । गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा ॥

कहइ करहु किन कोटि उपाया । इहाँ न लागिहि राउरि माया ॥

दुइ कि होइ एक समय भुआला । हँसब ठठाइ फुलाउब गाला ॥

तनु तिय तनय धामु धनु धरनी । सत्यसध कहुँ तृन सम बरनी ॥

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी । ईसु देइ फलु हृदयँ बिचारी ॥

करइ जो करम पाव फल सोई । निगम नीति असि कह सबु कोई ॥

औरु करै अपराधु कोउ, और पाव फल भोगु ।
अति बिचित्र भगवंत गति, को जग जानै जोगु ॥

जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू । बिनु रघुबीर अवध नहिं काजू ॥

रामचरन पकज प्रिय जिन्हही । विषयभोग बस करहिं कि तिन्हही ॥

मुनि तापस जिन्ह तें दुख लहहीं । ते नरेस बिनु पावक दहहीं ॥

मगल मूल बिप्र परितोषू । दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू ॥

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई॥

रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा॥

अहि अघ अवगुन नहिं मनि गहई। हरइ गरल दुख दारिद दहई॥

जरउ सो संपति सदन सुख, सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद, करइ न सहस सहाइ॥

संपति चकई भरत चक, मुनि आयसु खेलवार।
तेहि निसि आश्रम पींजरा, राखे भा भिनुसार॥

बिषई जीव पाइ प्रभुताई। मूढ मोह बस होहिं जनाई॥

छत्रि जाति रघुकुल जनमु, राम अनुग जगुजान।
लातहुँ मारें चढ़ति सिर, नीच को धूरि समान॥

फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकता प्रसव कि संबुक ताली॥

सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल, सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल॥

ईस रजाइ सीस सबही कें। उतपति थिति लय बिषहु अमी कें॥
जगभल पोच ऊँच अरु नीचू। अमिअ अमरपद माहुरु मीचू॥
राम रजाइ मेट मन माहीं। देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं॥

लखि हिय हँसि कह कृपा निधानू। सरिस स्वान मघवान जुवानू॥
जे गुरुचरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल बिभव बस करहीं॥

को रघुबीर सरिस संसारा। सीलु सनेहु निबाहनिहारा॥

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना॥

कसें कनकु मनि पारिखि पाये। पुरुष परिखियहि समयँ सुभाये॥

प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं। अगिनि धूम गिरि सिर तिनु धरहीं॥

सो सुख करम धरम जरि जाऊ। जहँ न रामपद पंकज भाऊ॥

फुटकर

मंगलमूल रामु सुत जासू। जो कछु कहिय थोर सब तासू॥

सुनु नृप जासु बिमुख पछिताहीं। जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं॥
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी। रामु पुनीत प्रेम अनुगामी॥

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगलमूल अमंगल दमनू॥

भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जल जारि करइ सोइ छारा॥

सेवहिं अरंडु कल्पतरु त्यागी। परिहरि अमृत लेहिं बिषु माँगी॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं। देखु बिचारि मातु मन माहीं॥

रामहिं मातु बचन सब भाए। जिमि सुरसरि गत सलिल सुहाए॥

चटु चवै बरु अनलकन, सुधा होइ बिष तूल।
सपनेहुँ कबहुँ न करहिं किछु, भरतु राम प्रतिकूल॥

ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाए। धन्य सो नगरु जहाँ तें आए॥
धन्य सो देसु सैल बन गाऊँ। जहँ जहँ जाहिं धन्य सोइ ठाऊँ॥

धन्य भूमि बन पंथ पहारा। जहँ जहँ नाथ पाँव तुम धारा॥
धन्य बिहँग मृग काननचारी। सफल जनम भये तुम्हहिं निहारी॥
हम सब धन्य सहित परिवारा। दीख दरस भरि नयन तुम्हारा॥

लोकप होहिं बिलोकत जासू। तेहि कि मोहि सक बिषय बिलासू॥

अरथ न धरम न काम रुचि, गति न चहौं निर्बान।
जनम जनम रति रामपद, यह बरदानु न आन॥

भरत सरिस को राम सनेही। जगु जप रामु रामु जप जेही॥

सुनि सिय सपन भरे जल लोचन। भये सोचबस सोच बिमोचन॥

जो परिहरहिं मलिन मन जानी। जो सनमानहि सेवकु मानी॥
मोरे सरन राम की पनही। राम सुस्वामि दोष सब जनहीं॥

तात जाय जनि करहु गलानी। ईस अधीन जीव गति जानी॥

बहुरि बिचारि परस्पर कहही। रघुपति भगत भगति बस अहहीं॥

सीतापति सेवक सेवकाई। कामधेनु सय सरिस सुहाई॥

कहउँ बचन सब स्वारथ हेतू। रहत न आरत के चित चेतू॥

परिहरि लखन राम बैदेही। जेहि घर भाव बाम बिधि तेही॥

दाहिन दैउ होइ जब सबही। राम समीप बसिय बन तबही॥

रौरे अग जोग जग को है। दीप सहाय कि दिनकर सोहै॥

तुम बिनु राम सकल सुख साजा। नरक सरिस दोउ राज समाजा॥

प्रान प्रान के जीव के, जिव सुख के सुख राम।
तुम्ह तजि तात सुहात गृह, जिन्हहिं तिन्हहि बिधि बाम॥

सीता राम चरन रति मोरे। अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे॥

जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू॥

अबिनय बिनय जथा रुचि बानी। छमिय देव अति आरत जानी॥

महाराज अब कीजिय सोई। सब कर धर्म सहित हित होई॥

अरण्यकाण्ड

राम जी के विमुख होने से हानि

काहूँ बैठन कहा न ओही। राखि को सकइ राम कर द्रोही॥
मातु मृत्यु पितु समन समाना। सुधा होइ बिष सुनु हरि जाना॥
मित्र करइ सत रिपु कै करनी। ता कहँ बिबुध नदी बैतरनी॥
सब जगु ताहि अनलहु ते ताता। जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता॥

स्त्रीधर्म

मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी॥
अमित दानि भर्ता बैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहि चारी॥
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना॥
ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना॥
एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पतिपद प्रेमा॥
जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं॥
उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं॥
मध्यम परपति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें॥
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकिष्ट त्रिय श्रुति अस कहई॥
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई॥
पति बंचक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प सत परई॥
छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिब्रत धर्म छाँड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई॥

सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय॥

राम जी के निवास से बन की शोभा

जब ते राम कीन्ह तहँ बासा। सुखी भए मुनि बीती त्रासा॥
गिरि बन नदी ताल छबि छाए। दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए॥
खग मृग बृंद अनंदित रहहीं। मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं॥
सो बन बरनि न सक अहिराजा। जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा॥

भक्तियोग

मै अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया॥
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ॥
एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा। जा बस जीव परा भवकूपा॥
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें॥
ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माहीं॥
कहिअ तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी॥

माया ईस न आपु कहुँ, जान कहिअ सो जीव।
बन्ध मोच्छप्रद सर्ब पर, माया प्रेरक सीव॥

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना॥
जातें बेगि द्रवउँ मै भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई॥
सो सुतंत्र अवलम्ब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना॥
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला॥
भगति कि साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहिं पावहिं प्रानी॥
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती॥

एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा॥
श्रवनादिक नव भक्ति दृढाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं॥
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ नेमा॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जानइ दृढ सेवा॥
मम गुन गावत पुलक सरीरा। गद गद गिरा नयन बह नीरा॥
काम आदि मद दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें॥

बचन कर्म मन मोरि गति, भजनु करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदयकमल महुँ, करउँ सदा बिश्राम॥

क्षत्रियों के कर्त्तव्य

हम छत्री मृगया बन करहीं। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं॥
रिपु बलवन्त देखि नहिं डरहीं। एक बार कालहु सन लरहीं॥

कौन जल्दी से नष्ट होते हैं

राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा॥
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढे किएँ अरु पाएँ॥
संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान तें ग्यान पान तें लाजा॥
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी॥

रावण की अपनी धारणा

सुर नर असुर नाग खग माहीं। मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं॥
खर दूषन मोहि सम बलवन्ता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवन्ता॥
सुर रंजन भंजन महिभारा। जौं भगवन्त लीन्ह अवतारा॥
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥
होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ एहा॥

दुष्टों की कृपा अच्छी नहीं होती

नवनि नीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई ॥
भयदायक खल कै प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी ॥

नव व्यक्तियों से विरोध न करना चाहिए

तब मारीच हृदयँ अनुमाना। नवहि बिरोधें नहिं कल्याना ॥
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कबि मानस गुनी ॥

प्रभु की दयालुता

कोमल चित अति दीन दयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला ॥
गीध अधम खग आमिषभोगी। गति दीन्ही जो जाचत जोगी ॥

नवधा भक्ति

प्रथम भगति सतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसगा ॥

गुर पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुनगन, करइ कपट तजि गान ॥

मत्र जाप मम दृढ बिस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा ॥
छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा ॥
सातवँ सम मोहिमय जग देखा। मोतें संत अधिक करि लेखा ॥
आठवँ जथालाभ सतोषा। सपनेहुँ नहिं देखइ पर दोषा ॥
नवम सरल सब सन छल हीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना ॥
नवमहुँ एकउ जिन्ह कें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई ॥
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ तोरें ॥
जोगि बृन्द दुरलभ गति जोई। तो कहुँ आज सुलभ भइ सोई ॥
मम दर्सन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा ॥

वन की शोभा पर एक श्लेष

लछिमन देखु बिपिन कइ सोभा। देखत केहि कर मन नहि छोभा ॥
नारि सहित सब खग मृग बृंदा। मानहुँ मोरि करत हहि निंदा ॥
हमहि देखि मृग निकर पराही। मृगी कहहिं तुम्ह कहँ भय नाही ॥
तुम्ह आनन्द करहु मृग जाए। कंचन मृग खोजन ए आए ॥
संग लाइ करिनीं करि लेही। मानहुँ मोहि सिखावनु देही ॥

बसंत ऋतु

देखहु तात बसंत सुहावा। प्रियाहीन मोहि भय उपजावा ॥
बिटप बिसाल लता अरुझानी। बिबिध बितान दिए जनु तानी ॥
कदलि ताल बर धुजा पताका। देखि न मोह धीर मन जाका ॥
बिबिध भाँति फूले तरु नाना। जनु बानैत बने बहु बाना ॥
कहुँ कहुँ सुन्दर बिटप सुहाए। जनु भट बिलग बिलग होइ छाए ॥
कूजत पिक मानहु गजमाते। ढेक महोख ऊँट बिसराते ॥
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत मराल सब ताजी ॥
तीतिर लावक पदचर जूथा। बरनि न जाइ मनोज बरूथा ॥
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना। चातक बंदी गुन गन बरना ॥
मधुकर मुखर भेरि सहनाई। त्रिबिध बयारि बसीठी आई ॥
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हे। बिचरत सबहि चुनौती दीन्हे ॥

सुन्दर उपमायें और शिक्षा

संत हृदय जस निर्मल बारी। बाँधे घाट मनोहर चारी ॥
जहँ तहँ पिअहिं बिबिध मृग नीरा। जनु उदार गृह जाचक भीरा ॥

पुरइन सघन ओट जल, बेगि न पाइअ मर्म।
मायाछन्न न देखिऐ, जैसें निर्गुन ब्रह्म ॥

सुखी मीन सब एक रस, अति अगाध जल माहिं ।
जथा धर्मसीलन्ह के, दिन सुख सजुत जाहिं ॥

बिकसे सरसिज नाना रंगा । मधुर मुखर गुंजत बहु भृंगा ॥
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा । प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा ॥
चक्रबाक बक खग समुदाई । देखत बनइ बरनि नहिं जाई ॥
सुंदर खगगन गिरा सुहाई । जात पथिक जनु लेत बोलाई ॥
ताल समीप मुनिन्ह गृह छाए । चहुँ दिसि कानन बिटप सुहाए ॥
चंपक बकुल कदंब तमाला । पाटल पनस परास रसाला ॥
नव पल्लव कुसुमित तरुनाना । चंचरीक पटली कर गाना ॥
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ । सतत बहइ मनोहर बाऊ ॥
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं । सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं ॥

फल भारन नमि बिटप सब, रहे भूमि निअराइ ।
पर उपकारी पुरुष जिमि, नवहिं सुसंपति पाइ ॥

राम नाम की प्रधानता

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका । श्रुति कह अधिक एक तें एका ॥
राम सकल नामन्ह ते अधिका । होउ नाथ अघ खग गन बधिका ॥

राका रजनी भगति तव, राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम उडगन बिमल, बसहुँ भगत उर ब्योम ॥

राम भक्त की रक्षा करते हैं

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी । जिमि बालक राखइ महतारी ॥
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई । तहँ राखइ जननी अरगाई ॥
प्रौढ़ भएँ तेहि सुत पर माता । प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता ॥
मोरें प्रौढ तनय सम ग्यानी । बालक सुत सम दास अमानी ॥

जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही॥
यह बिचारि पडित मोहि भजही। पाएहुँ ग्यान भगति नहि तजही॥

स्त्री सबसे दुखदाई है

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, मायारूपी नारि॥

सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता॥
जप तप नेम जलाश्रय झारी। होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी॥
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहि हरषप्रद बरषा एका॥
दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई॥
धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा॥
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई॥
पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड रजनी अँधियारी॥
बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहि प्रबीना॥

अवगुन मूल सूल प्रद, प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवारन, मुनि मै यह जियँ जानि॥

सन्तों के गुण

षट बिकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा॥
अमित बोध अनीह मित भोगी। सत्य सार कबि कोबिद जोगी॥
सावधान मानद मदहीना। धीर धर्मगति परम प्रबीना॥

गुनागार संसार दुख, रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय, तिन्ह कहुँ देह न गेह॥

निज गुन श्रवन सुनत सकुचाही। पर गुन सुनत अधिक हरषाही॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती॥

जप तप ब्रत दम संजम नेमा। गुरु गोबिंद बिप्रपद प्रेमा॥
श्रद्धा छमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया॥
बिरति बिबेक बिनय बिग्याना। बोध जथारथ बेद पुराना॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ॥
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला॥
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते। कहि न सकहि सारद श्रुति तेते॥

सूक्तियाँ

उमा राम गुन गूढ़, पंडित मुनि पावहि बिरति।
पावहिं मोह बिमूढ, जे हरि बिमुख न धर्म रति॥

कलिमल समन दमन मन, राम सुजस सुख मूल।
सादर सुनहिं जे तिन्ह पर, राम रहहि अनुकूल॥

कठिन काल मल कोस, धर्म न ग्यान न जोग जप।
परिहरि सकल भरोस, रामहि भजहि ते चतुर नर॥

भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी॥
होइ बिकल सक मनहि न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहि बिलोकी॥

सेवक सुख चह मान भिखारी। ब्यसनी धन सुभगति बिभिचारी॥
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी॥

रन चढि करिअ कपट चतुराई। रिपु पर कृपा परम कदराई॥

इमि कुपथ पग देत खगेसा। रह न तेज तन बुधि बल लेसा॥

पर हित बस जिन्ह के मन माही। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाही॥
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगतिहीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा॥

सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ॥
राखिअ नारि जदपि उर माही। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं॥

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन, करहिं निमिष महुँ छोभ॥

लोभ कें इच्छा दम्भ बल, काम कें केवल नारि।
क्रोध के परुष बचन बल, मुनिवर कहहि बिचारि॥

उमा कहौ अनुभव अपना। सत हरि भजन जगत सब सपना॥
सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी॥

क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहि सकल राम कीं दाया॥
सो नर इंद्रजाल नहिं भूला। जापर होइ सो नट अनुकूला॥

दीप सिखा सम जुबति तन, मन जन होसि पतग।
भजहि राम तजि काम मद, करहि सदा सतसंग॥

फुटकर

नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्हीं कृपा जानि जन दीना॥

हे विधि दीनबन्धु रघुराया। मो से सठ पर करिहहिं दाया॥

जो कोसलपति राजिवनयना। करहु सो राम हृदय मम अयना॥

अस अभिमान जाइ जनि भोरे। मै सेवक रघुपति पति मोरे॥

यह बर माँगउँ कृपा निकेता। बसहु हृदयँ श्री अनुज समेता॥
(जन्म जन्म तव पद सुखकन्दा। बढै प्रेम चकोर जिमि चन्दा॥)

किष्किन्धाकाण्ड

काशी की महिमा

मुक्ति जन्म महि जानि, ज्ञान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस संभु भवानि, सो कासी सेइअ कस न॥

शंकर जी की महिमा

जरत सकल सुर बृंद, विषम गरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद, को कृपालु संकर सरिस॥

सच्ची मित्रता

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्र क दुख रज मेरु समाना॥
जिन्ह कें असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई॥
कुपथ निवारि सुपथ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा॥
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई॥
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा॥
आगे कह मृदु बचन बनाई। पाछें अनहित मन कुटिलाई॥
जाकर चित अहिगति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई॥

कन्या के समान कौन हैं

अनुजबधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई॥

बाली की अन्तिम अभिलाषा

जन्म जन्म मुनि जतनु कराही। अन्त राम कहि आवत नाही॥
जासु नाम बल सकर कासी। देत सबहि सम गति अबिनासी॥
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा॥
सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावही।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावही॥
मोहिं जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीर ही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरुबारि करहि बबूर ही॥
अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहि जोनि जन्मौ कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ॥
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिये।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अगद कीजिये॥

शरीर की रचना

छिति जल पावक गगन समीरा। पच रचित अति अधम सरीरा॥
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा॥

वर्षावर्णन

बरषाकाल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहाए॥
लछिमन देखु मोरगन, नाचत बारिद पेखि।
गृही बिरति रत हरष जस, बिष्नुभगत कहुँ देखि॥
घन घमड नभ गरजत घोरा। प्रियाहीन डरपत मन मोरा॥
दामिनि दमक रह न घन माही। खल कै प्रीति जथा थिर नाही॥
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहि बुध बिद्या पाएँ॥
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन सत सह जैसें॥
छुद्र नदी भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई॥

भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी॥
समिटि समिटि जल भरहि तलावा। जिमि सद्गुन सज्जन पहिं आवा॥
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई॥

हरित भूमि तृन सकुल, समुझ परहिं नहि पथ।
जिमि पाखड बाद तें, गुप्त होहि सदग्रन्थ॥

दादुर धुनि चहुँ दिसा सुहाई। बेद पढहिं जनु बटु समुदाई॥
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका॥
अर्क जवास पात बिनु भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ॥
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी॥
ससि सपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै सपति जैसी॥
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दम्भिन्ह कर मिला समाजा॥
महाबृष्टि चलि फूटि किआरी। जिमि सुतन्त्र भएँ बिगरहिं नारीं॥
कृषी निरावहि चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना॥
देखिअत चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं॥
ऊषर बरषइ तृन नहि जामा। जिमि हर जन हियँ उपज न कामा॥
बिबिध जतु सकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ जिमि पाइ सुराजा॥
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इन्द्रियगन उपजें ग्याना॥

कबहुँ प्रबल वह मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजें, कुल सद्धर्म नसाहिं॥
कबहुँ दिवस महँ निबिड तम, कबहुँक प्रगट पतग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि, पाइ कुसग सुसग॥

शरद् ऋतु का वर्णन

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सोहाई॥
फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढाई॥

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा । जिमि लोभहि सोषइ सतोषा ॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा । सत हृदय जस गत मद मोहा ॥
रस रस सूख सरित सर पानी । ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी ॥
जानि सरद रितु खजन आए । पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए ॥
पक न रेनु सोह असि धरनी । नीति निपुन नृप कै जसि करनी ॥
जल सकोच बिकल भइँ मीना । अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना ॥
बिनु घन निर्मल सोह अकासा । हरिजन इव परिहरि सब आसा ॥
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी । कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी ॥

चले हरषि तजि नगर नृप, तापस बनिक भिखारि ।
जिमि हरि भगति पाइ श्रम, तजहि आश्रमी चारि ॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा । जिमि हरि सरन न एकउ बाधा ॥
फूलें कमल सोह सर कैसा । निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जैसा ॥
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा । सुन्दर खग रव नाना रूपा ॥
चक्रबाक मन दुख निसि पेखी । जिमि दुर्जन पर सपति देखी ॥
चातक रटत तृषा अति ओही । जिमि सुख लहइ न संकर द्रोही ॥
सरदातप निसि ससि अपहरई । सत दरस जिमि पातक टरई ॥
देखि इंदु चकोर समुदाई । चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ॥
मसक दस बीते हिम त्रासा । जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा ॥

भूमि जीव सकुल रहे, गए सरद रितु पाइ ।
सदगुर मिलें जाहि जिमि, ससय भ्रम समुदाइ ॥

माया बड़ी प्रबल है

नाइ चरन सिरु कह कर जोरी । नाथ मोहि कछु नाहि न खोरी ॥
अतिसय प्रबल देव तव माया । छूटइ राम करहु जौं दाया ॥
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी । मै पाँवर पसु कपि अति कामी ॥

नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा॥
लोभ पाँस जेहि गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया॥
यह गुन साधन ते नहि होई। तुम्हरी कृपा पाव कोउ कोई॥

सूक्तियाँ

सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। मायाकृत परमारथ नाहीं॥

नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस वेद अस गावत॥

उमा दारु जोषित की नाई। सबहि नचावत रामु गोसाईं॥

सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥

नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं॥

भानु पीठि सेइअ उर आगी। स्वामिहि सर्बभाव छल त्यागी॥

तजि माया सेइअ परलोका। मिटहि सकल भव सभव सोका॥

देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बिहाई॥

सोइ गुनग्य सोई बडभागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी॥

हम सब सेवक अति बड़भागी। सतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥

निज इच्छा प्रभु अवतरइ, सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ, रहहि मोच्छ सब त्यागि॥

नीलोत्पल तनु स्याम, काम कोटि सोभा-अधिक।
सुनिय तासु गुन ग्राम, जासु नाम अघ खग बधिक॥

फुटकर

समदर्सी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ॥

सुनि सेवक दुख दीन दयाला। फरकि उठी द्वै भुजा बिसाला॥

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी॥

अब प्रभु कृपा करहु यहि भाँती। सब तजि भजन करहुँ दिनराती॥

सुख सपति परिवार बड़ाई। सब परिहरि करिहौं सेवकाई॥
ए सब रामभक्ति के बाधक। कहहिं संत तव पद अवराधक॥

स्याम गात सिर जटा बनाएँ। अरुन नयन सर चाप चढाएँ॥
पुनि पुनि चितै चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा॥

उमा राम सम हित जग माही। गुरु पितु मातु बन्धु प्रभु नाही॥

जानत हूँ अस प्रभु परिहरही। काहे न बिपति जाल नर परही॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकौ बाधा॥

जासु कृपाँ छूटइ मद मोहा। ता कहँ उमा कि सपनेहुँ कोहा॥

तात राम कहँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु॥

पापिउ जाकर नाम सुमिरिही। अति अपार भवसागर तरही॥

सुन्दरकाण्ड

सत्सङ्ग की महिमा

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख, धरिअ तुला एक अग।
तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसग ॥

राम जो का स्मरण कर काम करिये

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा ॥
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥
गरुड सुमेरु रेनुसम ताही। रामकृपा करि चितवा जाही ॥

विभीषण की दीनता

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी ॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहि कृपा भानुकुलनाथा ॥
तामसु तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं ॥
अब मोहि भा भरोस हनुमन्ता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहि संता ॥
जौ रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहिं दरसु हठि दीन्हा ॥

हनुमान जी का आश्वासन

सुनहु बिभीषण प्रभु कइ रीती। करहि सदा सेवक पर प्रीती ॥
कहहु कवन मै परम कुलीना। कपि चचल सबहीं बिधिहीना ॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलइ अहारा ॥

अस मै अधम सखा सुनु, मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन, भरे बिलोचन नीर ॥

जानत हूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहि ते काहे न होहि दुखारी ॥

सीता जी की वियोगावस्था

कृसतनु सीस जटा एक बेनी । जपति हृदयँ रघुपति गुनश्रेनी ॥
निज पद नयन दिएँ मन, राम कमल पद लीन ।
परमदुखी भा पवनसुत, देखि जानकी दीन ॥

सीता जी का सतीत्व

स्याम सरोज दाम सम सुदर । प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर ॥
सो भुज कठ कि तव असि घोरा । सुनु सठ अस प्रबान पन मोरा ॥
चन्द्रहास हरु मम परिताप । रघुपति बिरह अनल सजात ॥
सीतल निसित बहसि बर धारा । कह सीता हरु मम दुख भारा ॥

सीता जी की व्याकुलता

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला । मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला ॥
देखिअत प्रगट गगन अगारा । अवनि न आवत एकउ तारा ॥
पावकमय ससि स्रवत न आगी । मानहुँ मोहि जानि हतभागी ॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका । सत्य नाम करु हरु मम सोका ॥
नूतन किसलय अनल समाना । देहि अगिनि जनि करहि निदाना ॥

राम जी की वियोगावस्था

कहेउ राम बियोग तव सीता । मो कहुँ सकल भए बिपरीता ॥
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू । काल निसासम निसि ससि भानू ॥
कुंबलय बिपिन कुंतबन सरिसा । बारिद तपत तेल जनु बरिसा ॥
जे हित रहे करत तेइ पीरा । उरग स्वास सम त्रिबिध समीरा ॥
कहेहू तें कछु दुख घटि होई । काहि कहैां यह जान न कोई ॥
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एकु मनु मोरा ॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाही । जानु प्रीति रसु एतनेहिं माही ॥

सुनि सीता दुःख प्रभु सुख अयना । भरि आए जल राजिव नयना ॥
बचन काय मन मम गति जाही । सपनेहु बूझिअ बिपति कि ताही ॥

हनुमान् जी को रावण का उपदेश

सुनु रावण ब्रह्मांड निकाया । पाइ जासु बल बिरचति माया ॥
जाकें बल बिरंचि हरि ईसा । पालत सृजत हरत दससीसा ॥
जा बल सीस धरत सहसानन । अंडकोस समेत गिरिकानन ॥
धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता । तुमसे सठन्ह सिखावनु दाता ॥
हरकोदंड कठिन जेहि भंजा । तेहि समेत नृप दल मद गंजा ॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली । बधे सकल अतुलित बलसाली ॥

जाके बल लवलेस तें, जितेहु चराचर झारि ।
तासु दूत मै जाकरि, हरि आनेहु प्रियनारि ॥

राम जी के बिना हानि

राम नाम बिनु गिरा न सोहा । देखु बिचारि त्यागि मद मोहा ॥
बसन हीन नहि सोह सुरारी । सब भूषन भूषित बर नारी ॥
राम बिमुख संपति प्रभुताई । जाइ रही पाई बिनु पाई ॥
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाही । बरषि गएँ पुनि तबहिं सुखाही ॥

राम जी की कृपा से सब होता है

जामवंत कह सुनु रघुराया । जापर नाथ करहु तुम्ह दाया ॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर । सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ॥
सोइ बिजई बिनई गुन सागर । तासु सुजसु त्रैलोक उजागर ॥

सीता जी की विकलता

नाम पाहरू दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट ।
लोचन निज पद जंत्रित, जाहि प्रान केहि बाट ॥

हनुमान जी का निहोरा

साखा मृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई॥
नाघि सिंधु हाटक पुर जारा। निसिचरगन बधि बिपिन उजारा॥
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई॥
ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं, जापर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभावँ बड़वानलहि, जारि सकइ खलु तूल॥

राम ही ईश्वर हैं

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता॥
गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनुधारी॥
जन रंजन भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता॥

राम शरणागत प्रतिपालक हैं

सरनागत कहुँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय, तिन्हहि बिलोकत हानि॥
कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥
पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजन मोर तेहि भाव न काऊ॥
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई॥
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

कुछ ज्ञान की बातें

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा॥
ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लगि बसति जीव मनमाहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं॥

अब मै कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥
तुम कृपाल जापर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला ॥

विभीषण-द्वारा राम का दर्शन

मै निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहि काऊ ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहि प्रभु हरषि हृदय मोहि लावा ॥
अहोभाग्य मम अमित अति, राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि सिव, सेव्य जुगल पद कंज ॥

राम जी किसको अपनाते हैं

जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ॥
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहिं बाँध बरि डोरी ॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहि मन माहीं ॥
अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें ॥
सगुन उपासक परहित, निरत नीति दृढ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विजपद प्रेम ॥

अनधिकारी को उपदेश निष्फल है

सठ सन विनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुन्दर नीती ॥
ममता रत सन ज्ञान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी ॥
क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा। ऊसर बीज बयें फल जथा ॥

सूक्तियाँ

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा ॥

एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी ॥

सुनु माता साखा मृग, नहिं बल बुद्धि बिसाल ।
प्रभु प्रताप तें गरुडहिं, खाइ परम लघु ब्याल ॥

सचिव बैद गुर तीनि जौं, प्रिय बोलहि भय आस ।
राजधर्म तन तीनि कर, होइ बेगिहीं नास ॥

काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक के पंथ ।
सब परिहरि रघुबीरहि, भजहु भजहि जेहि संत ॥

जौं आपन चाहै कल्याना । सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना ॥
सो परनारि लिलारु गोसाईं । तजउ चउथि के चंद कि नाईं ॥

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना । जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना ॥

साधु अवग्या तुरत भवानी । कर कल्यान अखिल कै हानी ॥

बरु भल बास नरक कर ताता । दुष्ट संग जनि देइ बिधाता ॥

तब लगि कुसल न जीव कहुँ, सपनेहुँ मन बिश्राम ।
जब लगि भजत न राम कहुँ, सोक धाम तजि काम ॥

जो संपति सिव रावनहि, दीन्हि दिएँ दसमाथ ।
सोइ संपदा बिभीषनहि, सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥

कादर मन कहुँ एक अधारा । दैव दैव आलसी पुकारा ॥

काटेहिं पइ कदरी फरइ, कोटि जतन कोउ सींच ।
बिनय न मान खगेस सुनु, डाटेहिं पइ नव नीच ॥

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥

फुटकर

जासु नाम जपि सुनहुँ भवानी। भवबन्धन काटहि नर ग्यानी॥
तासु दूत कि बन्ध तर आवा। प्रभु कारज लगि कपिहि बँधावा॥

राम बिमुख सपति प्रभुताई। जाय रही पाई बिनु पाई॥

प्रभु कर पंकज कपि कर सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा॥

उमा राम सुभाउ जिन जाना। ताहि भजन तजि भाव न आना॥

जासु सकल मगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती॥

चौदहभुवन एक पति होई। भूत द्रोह तिष्ठइ नहि सोई॥

गुन सागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहइ न कोऊ॥

सरन गए प्रभु ताहु न त्यागा। विस्वद्रोह कृत अघ जेहि लागा॥
जासु नाम त्रयताप नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझ जिय रावन॥

उमा सत कै इहै बड़ाई। मद करत जो करइ भलाई॥

जिन पायन कर पादुका, भरत रहे मन लाय।
ते पद आज बिलोकिहौं, इन नयननि अब जाय॥

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥

लंकाकाण्ड

राम और शिव की एकता

लिंग थापि बिधिवत करि पूजा । सिव समान प्रिय मोहिं न दूजा ।।
सिव द्रोही मम भगत कहावा । सो नर सपनेहुँ मोहिं न पावा ।।
संकर बिमुख भगति चह मोरी । सो नारकी मूढ मति थोरी ।।

सकर प्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास ।
ते नर करहि कलप भर, घोर नरक महुँ बास ।।

रामेश्वरधाम का दर्शन

जे रामेश्वर दर्शन करिहहि । ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं ।।
जो गगाजलु आनि चढाइहिं । सो साजुज्य मुक्ति नर पाइहिं ।।
होइ अकाम जो छल तजि सेइहिं । भगति मोरि तेहि शकर देइहि ।।
मम कृत सेतु जो दरसनु करिही । सो बिनु श्रम भवसागर तरिही ।।

महान् की क्षुद्र से तुलना नहीं हो सकती

जासु परसु सागर खर धारा । बूडे नृप अगनित बहुबारा ।।
तासु गर्व जेहि देखत भागा । सो नर क्यों दससीस अभागा ।।
राम मनुज कस रे सठ बंगा । धन्वी कामु नदी पुनि गगा ।।
पशु सुरधेनु कल्पतरु रूखा । अन्नदान अरु रस पीयूषा ।।
बैनतेय खग अहि सहसानन । चिन्तामनि पुनि उपल दसानन ।।
सुनु मतिमन्द लोक बैकुण्ठा । लाभ कि रघुपति भगति अकुण्ठा ।।

सेनसहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि ।
कस रे सठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि ।।

चन्द्रमा पर अनेक उक्तियाँ

पूरब दिसा बिलोकि प्रभु, देखा उदित मयक।
कहत सबहि देखहु ससिहि, मृगपति सरिस असक।।

पूरब दिसि गिरिगुहा निवासी। परम प्रताप तेज बल रासी।
मत्त नाग तम कुम्भ बिदारी। ससि केसरी गगन बनचारी॥
बिथुरे नभ मुकुता हल तारा। निसि सुदरी केर सिंगारा।।
कह प्रभु ससि महुँ मेचकताई। कहहु काह निज निज मति भाई।।
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। ससि महुँ प्रगट भूमि कै झाँई।।
मारेहु राहु ससिहि कह कोई। उर महँ परी स्यामता सोई॥
कोउ कह जब बिधि रति मुख कीन्हा। सार भाग ससि कर हरि लीन्हा।।
छिद्र सो प्रगट इदु उर माहीं। तेहि मग देखिअ नभ परिछाहीं।।
प्रभु कह गरल बन्धु ससि केरा। अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा।।
बिष सजुत कर निकर पसारी। जारत बिरहवत नर नारी।।

कह हनुमन्त सुनहु प्रभु, ससि तुम्हार प्रिय दास।
तव मूरति बिधु उर बसति, सोइ स्यामता अभास॥

राम जी का विराट्स्वरूप

बिस्वरूप रघुबस मनि, करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर, अग अग प्रति जासु।।

पद पाताल सीस अज धामा। अपर लोक अँग अँग बिश्रामा।।
भृकुटि बिलास भयकर काला। नयन दिवाकर कच घनमाला।।
जासु घ्रान अस्विनीकुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।।
श्रवन दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी।।
अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला॥
आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।।

रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा॥
उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना॥
अहकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर, रूप राम भगवान॥

मन्दोदरी की शिक्षा

अहह कत कृत राम बिरोधा। काल बिबस मन उपज न बोधा॥
कालदण्ड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा॥
निकट काल जेहि आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं॥

स्त्रियों में आठ अवगुण

नारि स्वभाव सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया॥

बैर से भी मोक्ष

खल मनुजाद द्विजामिष भोगी। पावहि गति जो जाचत जोगी॥
उमा राम मृदुचित करुनाकर। बयर भाव सुमिरत मोहिं निसिचर॥
देहिं परमगति सो जियँ जानी। अस कृपालु को कहहु भवानी॥
अस प्रभु सुनि न भजहिं भ्रम त्यागी। नर मतिमंद ते परम अभागी॥

सगुणचरित्र की दुर्गमता

चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाइ बुद्धि बल बानी॥
असि बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहिं भजहिं तर्क सब त्यागी॥

शस्त्ररहित की विजय

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा॥
अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा॥
नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥

सुनहु सखा कह कृपानिधाना । जेहि जय होइ सो स्यंदन आना ॥
सौरज धीरज तेहि रथचाका । सत्य सील दृढ़ ध्वजापताका ॥
बल बिबेक दम परहित घोरे । छमा कृपा समता रजु जोरे ॥
ईस भजनु सारथी सुजाना । बिरति चर्म संतोष कृपाना ॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा । बर बिग्यान कठिन कोदंडा ॥
अमल अचल मन त्रोन समाना । समजम नियम सिलीमुख नाना ॥
कवच अभेद बिप्र गुरपूजा । एहि सम बिजय उपाय न दूजा ॥
महा अजय संसार रिपु, जीति सकइ सो बीर ।
जाकें अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मति धीर ॥

अशुभ सूचनायें

असुभ होन लागे तब नाना । रोवहिं खर सृकाल बहु स्वाना ॥
बोलहिं खग जग आरति हेतू । प्रगट भए नभ जहँ तहँ केतू ॥
दस दिसि दाह होन अति लागा । भयउ परब बिनु रबि उपरागा ॥
मंदोदरि उर कंपति भारी । प्रतिमा स्रवहिं नयन मग बारी ॥

पाप का अन्तिम परिणाम

तव बल नाथ डोल नित धरनी । तेजहीन पावक ससि तरनी ॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा । सो तनु भूमि परेउ भरि छारा ॥
बरुन कुबेर सुरेस समीरा । रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा ॥
भुज बल जितेहु काल जम साईं । आजु परेहु अनाथ की नाईं ॥
जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई । सुत परिजन बल बरनि न जाई ॥
रामबिमुख अस हाल तुम्हारा । रहा न कोउ कुल रोवनिहारा ॥
तव बस बिधि प्रपंच सब नाथा । सभय दिसिप नित नावहिं माथा ॥
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं । राम बिमुख यह अनुचित नाहीं ॥

सूक्तियाँ

लव निमेष परमानु जुग, बरष कलप सर चंड ।
भजसि न मन तेहि राम कहँ, कालु जासु कोदंड ॥

श्री रघुबीर प्रताप ते, सिंधु तरे पाषान ।
ते मतिमंद जे राम तजि, भजहिं जाइ प्रभु आन ॥

नाथ बयरु कीजे ताही सों । बुधि बल सकिअ जीति जाही सों ॥

प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं । ऐसे नर निकाय जग अहहीं ॥

बचन परमहित सुनत कठोरे । सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे ॥

फूलइ फरइ न बेत, जदपि सुधा बरषहिं जलद ।
मूरख हृदयँ न चेत, जौं गुर मिलहिं बिरंचिसम ॥

बहुत बुझाइ तुम्हहि का कहऊँ । परम चतुर मैं जानत अहऊँ ॥

प्रीति बिरोध समान सन, करि अनीति असि जाहि ।
जौं मृगपति बध मेड्डुकन्हि, भल कि कहइ कोउ ताहि ॥

कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा । अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा ॥
सदा रोगबस संतत क्रोधी । बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी ॥
तनु पोषक निंदक अघ खानी । जीवत सव सम चौदह प्रानी ॥

हरिहर निंदा सुनइ जे काना । होइ पाप गोघात समाना ॥

फुटकर

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारइ भुवन चारि दस आसू ॥
सक संग्राम जीति को ताही। सेवहिं सुर नर अग जग जाही ॥

काल ब्याल कर भच्छक जोई। सपनेहुँ समर कि जीतिय सोई ॥

अहह दैव मैं कत जग जायउँ। प्रभु के एकहु काज न आयउँ ॥

बहु बिधि सोचत सोच बिमोचन। स्रवत सलिल राजिवदल लोचन ॥
उमा अखंड एक रघुराई। नर गति भगत कृपाल देखाई ॥

हैं दससीस मनुज रघुनायक। जाके हनूमान से पायक ॥

कीन्हेउ प्रभु बिरोध तेहि देवक। सिव बिरंचि सुर जाके सेवक ॥

धन्य धन्य तैं धन्य बिभीषन। भयहु तात निसिचर कुलभूषन ॥

छीजहिं निसिचर दिन अरु राती। निज मुख कहें सुकृत जेहि भाँती ॥

ब्याल पास बस भये खरारी। स्वबस अनन्त एक अबिकारी ॥

गिरिजा जासु नाम जपि, मुनि काटहिं भव पास।
सो कि बंधतर आवइ, व्यापक बिस्व निवास ॥

जय अनन्त जय जगदाधारा। प्रभु तुम सब देवन्ह निस्तारा ॥

ताहि कि संपति सगुन सुभ, सपनेहुँ मन बिश्राम।
भूत द्रोह रत मोह बस, राम बिमुख रत काम॥

निफल होहिं रावण सर कैसें। खल के सकल मनोरथ जैसें॥

बिफल होहिं सब उद्यम ताके। जिमि परद्रोह निरत मनसा के॥

जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर, तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत बिषय बिवर्ध जिमि, नित नित नूतन मार॥

प्रभु अग्या धरि सीस, चरन बन्दि अगद उठेउ।
सोइ गुनसागर ईस, रामकृपा जापर करहु॥

सुनु सठ भेद होइ मन ताकें। श्री रघुबीर हृदय नहि जाकें॥

राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहि न तव रसना अभिमानी॥
गिरिहहिं रसना ससय नाही। सिरन्ह समेत समर महि माँही॥

पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी। मोह बिटप नहि सकहिं उपारी॥

भूमि न छाँड़त कपि चरन, देखत रिपु मद भाग।
कोटि बिघ्न ते सत कर, मन जिमि नीति न त्याग॥

जगदातमा प्रानपति रामा। तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा॥
उमा राम की भृकुटि बिलासा। होइ बिम्व पुनि पावइ नासा॥
तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई। तासु दूत पन कहु किमि टरई॥

प्रिय तुम ताहि जितब सग्रामा। जाके दूत केर यह कामा॥

तेहि कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू। मुधा मान ममता मद बहहू॥

भयउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं। ग्यान उदय जिमि ससय जाहीं॥

बेद पुरान जासु जसु गायो। राम बिमुख काहुँ न सुख पायो॥

जासु प्रबल माया बस, सिव बिरचि बड छोट।
ताहि दिखावै निसिचर, निज माया मति खोट॥

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं। तिन्ह कहुँ राम भगति निज देहीं॥

अहह नाथ रघुनाथ सम, कृपासिन्धु नहिं आन।
जोगि बृन्द दुर्लभ गति, तोहि दीन्ह भगवान॥

प्रभु सक त्रिभुअन मारि जिआई। केवल सकहि दीन्हि बड़ाई॥

खल मल धाम काम रत रावन। गति पाई जो मुनिवर पाव न॥

बीतें अवधि जाउँ जौ, जियत न पावउँ वीर।
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु, पुनि पुनि पुलक सरीर॥

मुनि जेहि ध्यान न पावहि, नेति नेति कह वेद।
कृपासिधु सोइ कपिन्ह सन, करत अनेक बिनोद॥

उमा जोग जप दान तप, नाना मख ब्रत नेम ।
रामकृपा नहि करहि तसि, जसि निष्केवल प्रेम ॥

सुनि प्रभु बचन लाज हम मरही । मसक कहूँ खगपति हित करही ॥

अब सोइ जतन करहु तुम ताता । देखहुँ नयन स्याम मृदु गाता ॥

सर्बसु खाइ भोग करि नाना । समर भूमि भए बल्लभ प्राना ॥

सुत बित नारि भवन परिवारा । होहि जाहि जग बारहि बारा ॥
अस बिचारि जियँ जागहु ताता । मिलइ न जगत सहोदर भ्राता ॥

जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा ।
ससार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल रसाल पनस समा ॥
एक सुमनप्रद एक सुमनफल एक फलइ केवल लागही ।
एक कहहि कहहि करहि अपर एक करहिं कहत न बागही ॥

यह कलिकाल मलायतन, मन करि देखु बिचार ।
श्री रघुनाथ नाम तजि, नाहिन आन अधार ॥

तब रघुपति रावन के, सीस भुजा सर चाप ।
काटे बहुत बढे पुनि, जिमि तीरथ के पाप ॥

काटत बढहि सीस समुदाई । जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई ॥

उमा काल मरु जाकी ईछा । सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा ॥

उत्तरकाण्ड

मातृभूमि अवधपुरी की शोभा

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना । बेद पुरान बिदित जगु जाना ॥
अवधपुरी सम प्रिय नहि सोऊ । यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ ॥
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि । उत्तर दिसि बह सरजू पावनि ॥
जा मज्जन ते बिनहि प्रयासा । मम समीप नर पावहि बासा ॥
अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी । मम धामदा पुरी सुखरासी ॥

राम जी की स्तुति

जय राम रमा रमन समन । भव ताप भयाकुल पाहि जन ॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो । सरनागत माँगत पाहि प्रभो ॥
दससीस बिनासन बीस भुजा । कृत दूरि महा महि भूरि रुजा ॥
रजनीचर बृन्द पतंग रहे । सर पावक तेज प्रचंड दहे ॥
महि मंडल मंडन चारुतर । धृत सायक चाप निषंग बर ॥
मद मोह महा ममता रजनी । तम पुंज दिवाकर तेज अनी ॥
मन जात किरात निपात किए । मृग लोग कुभोग सरेन हिए ॥
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे । बिषया बन पावर भूलि परे ॥
बहु रोग बियोगन्हि लोग हए । भव दंघ्रि निरादर के फल ए ॥
भवसिंधु अगाध परे नर ते । पद पंकज प्रेम न जे करते ॥
अति दीन मलीन दुखी नितही । जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं ॥
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के । प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह के ॥
नहि राग न लोभ न मान मदा । तिन्ह के सम बैभव वा बिपदा ॥
एहि ते तव सेवक होत मुदा । मुनि त्यागत जोग भरोस सदा ॥

करि प्रेम निरन्तर नेम लिएँ। पद पकज सेवत सुद्ध हिएँ॥
सम मानि निरादर आदरही। सब सत सुखी बिचरत मही॥
मुनि मानस पकज भृग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे॥
तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी॥
गुन सील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरतर श्रीरमनं॥
रघुनद निकदय द्वद घनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं॥

बार बार बर मागउँ, हरषि देहु श्रीरग।
पदसरोज अनपायनी, भगति सदा सतसग॥

रामराज

बरनाश्रम निज निज धरम, निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहि सुखहिं, नहिं भय सोक न रोग॥

दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहुहि ब्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती॥
चारिउ चरन धर्म जगमाही। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाही॥
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परमगति के अधिकारी॥
अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना॥
सब निर्दभ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी॥

रामराज नभगेस सुनु, सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन, कृत दुख काहुहि नाहिं॥

भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला॥
भुअन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥
सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी॥
सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरिएहिं चरित तिन्हहु रति मानी॥

सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहि महा मुनिवर दम सीला ॥
रामराज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा ॥
सब उदार सब पर उपकारी। बिप्रचरन सेवक नर नारी ॥
एक नारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी ॥

दंड जीतन्ह कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस, रामचंद्र के राज ॥

फूलहिं फरहि सदा तरु कानन। रहहि एक सँग गज पंचानन ॥
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई ॥
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहि बन करहि अनंदा ॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा ॥
लता बिटप मागें मधु चवहीं। मन भावतो धेनु पय स्रवहीं ॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी ॥
प्रगटी गिरिन्ह बिबिध मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी ॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी ॥
सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहि रत्न तटन्हि नर लहहीं ॥
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा ॥

बिधु महि पूर मयूखन्हि, रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल, रामचन्द्र कें राज ॥

सन्तों के लक्षण

संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥

ताते सुर सीसन्ह चढ़त, जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहि, परसु बदन यह दंड ॥

बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर ॥
सम अभूत रिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी ॥

कोमल चित्त दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥
सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी ॥
बिगत काम मम नाम परायन। साति बिरति बिनती मुदितायन ॥
सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री ॥
ए सब लच्छन बसहि जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर ॥
सम दम नियम नीति नहि डोलहि। परुष बचन कबहूँ नहि बोलहि ॥

निन्दा अस्तुति उभय सम, ममता मम पदकंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुनमंदिर सुखपुंज ॥

असन्तों के लक्षण

सुनहु असतन्ह केर सुभाऊ। भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ ॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई ॥
खलन्ह हृदय अति ताप बिसेषी। जरहि सदा पर संपति देखी ॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहि पराई। हरषहि मनहुँ परी निधि पाई ॥
काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥
बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों ॥
झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना ॥
बोलहि मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा ॥

परद्रोही पर दार रत, पर धन पर अपबाद।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरें मनुजाद ॥

लोभइ ओढन लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न ॥
काहू की जौं सुनहि बड़ाई। स्वास लेहि जनु जूड़ी आई ॥
जब काहू कै देखहि बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती ॥
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी ॥
मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं ॥
करहिं मोहबस द्रोह परावा। संत संग हरिकथा न भावा ॥

अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा॥
ऐसे अधम मनुज खल, कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु, होइहहिं कलिजुग माहिं॥

मनुष्य-शरीर की अज्ञानता

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा॥
सो परत्र दुख पावइ, सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि, मिथ्या दोस लगाइ॥
एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई। गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी॥
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥
कबहुँक करि करुना नरदेही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥
नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
करनधार सद्गुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥
जो न तरै भवसागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति, आत्माहन गति जाइ॥

परलोक जाने का सुलभ मार्ग

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई॥
ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ। भक्तिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ॥

भक्ति सुतत्र सकल सुखखानी । बिनु सतसग न पावहिं प्रानी ॥
पुन्यपुज बिनु मिलहिं न सता । सतसगति ससृति कर अता ॥
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा । मन क्रम बचन बिप्र पदपूजा ॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा । जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा ॥
औरउ एक गुपुत मत, सबहि कहउँ कर जोरि ।
सकरभजन बिना नर, भगति न पावइ मोरि ॥
कहहु भगति पथ कवन प्रयासा । जोग न मख जप तप उपबासा ॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई । जथा लाभ सतोष सदाई ॥
मोर दास कहाइ नर आसा । करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा ॥
बहुत कहउँ का कथा बढाई । एहि आचरन बस्य मै भाई ॥
बैर न बिग्रह आस न त्रासा । सुखमय ताहि सदा सब आसा ॥
अनारभ अनिकेत अमानी । अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी ॥
प्रीति सदा सज्जन ससर्गा । तृन सम बिषय स्वर्ग अपवर्गा ॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई । दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ॥
मम गुन ग्राम नाम रत, गत ममता मद मोह ।
ताकर सुख सोइ जानइ, परानद सदोह ॥

सब साधनों का मूल रामभक्ति

जप तप नियम जोग निज धर्मा । श्रुति सभव नाना सुभकर्मा ॥
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन । जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन ॥
आगम निगम पुरान अनेका । परे सुने कर फल प्रभु एका ॥
तव पद पकज प्रीति निरतर । सब साधन कर यह फल सुन्दर ॥
छूटइ मल कि मलहि के धोएँ । घृत कि पाव कोउ बारि बिलोएँ ॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई । अभिअतर मल कबहुँ न जाई ॥
सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पडित । सोइ गुनगृह बिग्यान अखडित ॥
दच्छ सकल लच्छन जुत सोई । जाकें पद सरोज रति होई ॥

राम की अनन्त महिमा

राम अनन्त अनन्त गुनानी। जन्म कर्म अनत नामानी॥
जल सीकर महि रज गनि जाही। रघुपति चरित न बरनि सिराही॥
रामचरित जे सुनत अघाही। रस बिसेष जाना तिन्ह नाही॥
जीवन मुक्त महामुनि जेऊ। हरिगुन सुनहिं निरतर तेऊ॥
भवसागर चह पार जो पावा। रामकथा ता कहँ दृढ नावा॥
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुनग्रामा। श्रवन सुखद अरुमन अभिरामा॥
श्रवनवत अस को जगमाही। जाहि न रघुपतिचरित सोहाही॥
ते जड़ जीव निजात्मक घाती। जिन्हहि न रघुपति कथा सोहानी॥

रामभक्त दुर्लभ है

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होइ धर्म ब्रतधारी॥
धर्मसील कोटिक महँ कोई। विषय विमुख बिरागरत होई॥
कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कहई। सम्यक ज्ञान सकृत कोउ लहई॥
ग्यानवत कोटिक महँ कोऊ। जीवन मुक्त सकृत जग सोऊ॥
तिन सहस्र महुँ सब सुखखानी। दुर्लभ ब्रह्मलीन बिग्यानी॥
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्म पर प्रानी॥
सब ते सो दुर्लभ सुरराया। रामभगति रत गत मद माया॥

सतसंग की महिमा

बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु रामपद, होइ न दृढ अनुराग॥

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ज्ञान विरागा॥

शिक्षा

मोह न अध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृस्ना केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

ग्यानी तापस सूर कबि, कोबिद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडबना, कीन्हि न एहिं ससार॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर, को अस लाग न जाहि॥
गुन कृत सन्यपात नहि केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही॥
जोबन ज्वर केहि नहि बलकावा। ममता केहिकर जस न नसावा॥
मच्छर काहि कलक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा॥
चिंता सांपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न व्यापी माया॥
कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥
सुत बित लोक ईसना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥
यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा॥
सिव चतुरानन जाहि डेराही। अपर जीव केहि लेखे माही॥
व्यापि रहेउ ससार महुँ, माया कटक प्रचड।
सेनापति कामादि भट, दभ कपट पाषड॥
सो दासी रघुबीर कै, समुझें मिथ्या सोपि।
छूट न रामकृपा बिनु, नाथ कहउँ पद रोपि॥

रामजी माया से परे हैं

जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहुँ न पावा॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥
जथा अनेक बेष धरि, नृत्य करै नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावै, आपु न होइ न सोइ॥
असि रघुपति लीला उरगारी। दनुज बिमोहनि जन सुखकारी॥

राम के भक्त उनको अत्यन्त प्यारे हैं

मम माया सभव ससारा। जीव चराचर बिबिध प्रकारा॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाये। सब ते अधिक मनुज मोहि भाये॥

तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी। तिन्ह महँ निगम धर्म अनुसारी॥
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ज्ञानी। ग्यानिहु ते अतिप्रिय बिग्यानी॥
तिन्ह ते पुनि मोहि प्रिय निज दासा। जेहि गति मोरि न दूसरि आसा॥
पुनि पुनि सत्य कहहुँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं॥
भगतिहीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रान प्रिय असि मम बानी॥

सुचि सुसील सेवक सुमति, प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग॥

एक पिता के बिपुल कुमारा। होहिं पृथक गुन सील अचारा॥
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता। कोउ धनवंत सूर कोउ दाता॥
कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई। सब पर पितहि प्रीति सम होई॥
कोउ पितु भगत बचन मन कर्मा। सपनेहुँ जान न दूसर धर्मा॥
सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना। जद्यपि सो सब भाँति अयाना॥
एहि बिधि जीव चराचर जेते। त्रिजग देव नर असुर समेते॥
अखिल बिस्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबरि दाया॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहि मन बच अरु काया॥

पुरुष नपुंसक नारि वा, जीव चराचर कोइ।
सर्ब भाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ॥

राम-कृपा से भक्ति की प्राप्ति

रामकृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई॥
जानें बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती॥
प्रीति बिना नहिं भक्ति दृढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई॥

शिक्षा

बिनु गुर होइ कि ग्यान, ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान, सुख कि लहिअ हरिभगति बिनु॥

कोउ बिश्राम कि पाव, तात सहज सतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव, कोटि जतन पचि पचि मरिअ॥

बिनु सतोष न काम नसाही। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं॥
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा॥
बिनु बिग्यान कि समता आवइ। कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावइ कोई॥
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ ससारा॥
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गोसाँई॥
निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा॥
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भवभय नासा॥

बिनु बिस्वास भगति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ, जीवन लह बिश्रामु॥
अस बिचारि मतिधीर, तजि कुतर्क ससय सकल।
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुन्दर सुखद॥

कलियुग के धर्म

कलिमल ग्रसे धर्म सब, लुप्त भए सद्ग्रन्थ।
दभिन्ह निज मति कल्पि करि, प्रगट किए बहु पन्थ॥

बरन धर्म नहि आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी॥
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहि मान निगम अनुसासन॥
मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पण्डित सोइ जो गाल बजावा॥
मिथ्यारभ दभ रत जोई। ताकहुँ सत कहइ सब कोई॥
सोइ सयान जो पर धन हारी। जोकर दभ सो बड़ आचारी॥
जो कह झूँठ मसखरी जाना। कलिजुग सोइ गुनवत बखाना॥

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी सो बिरागी॥
जाकें नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला॥

असुभ बेष भूषन धरें, भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर, पूज्य ते कलिजुग माहिं॥
जे अपकारी चार, तिन्हकर गौरव मान्य तेइ।
मन क्रम बचन लबार, तेइ बकता कलिकाल महुँ॥

नारि बिबस नर सकल गोसाईं। नाचहिं नट मर्कट की नाईं॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहि ग्याना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना॥
सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव बिप्र श्रुति मन बिरोधी॥
गुन मदिर सुदर पति त्यागी। भजहि नारि परपुरुष अभागी॥
सौभागिनी बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिगार नवीना॥
गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहि देखा॥
हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई॥
मातु पिता बालकन्हि बोलावहि। उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं॥

ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर, कहहि न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस, करहिं बिप्र गुर घात॥
बादहि सूद्र द्विजन्ह सन, हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर, आँखि देखावहिं डाटि॥

पर त्रिय लपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने॥
तेइ अभेदवादी ग्यानी नर। देखा मै चरित्र कलिजुग कर॥
आपु गए अरु तिन्हहू घालहिं। जे कहुँ सत मारग प्रतिपालहि॥
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूषहि श्रुति करि तरका॥
जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा॥
नारि मुई गृह सपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहि सन्यासी॥

ते बिप्रन्ह सन आपु पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं॥
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचार सठ बृषली स्वामी॥
सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना॥
सब नर कल्पित करहि अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा॥

भए बरनसंकर कलि, भिन्न सेतु सब लोग।
करहि पाप पावहि दुख, भय रुज सोक बियोग॥
श्रुति समत हरि भक्ति पथ, संजुत बिरति बिबेक।
तेहिं न चलहि नर मोह बस, कल्पहिं पंथ अनेक॥

बहु दाम सँवारहि धाम जती। बिषया हरि लीन्हि न रहि बिरती॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही। कलि कौतुक तात न जात कही॥
कुलवंत निकारहिं नारि सती। गृह आनहिं चेरि निबेरि गती॥
सुत मानहि मातु पिता तब लौं। अबलानन दीख नही जब लौं॥
ससुरारि पिआरि लगी जब तें। रिपुरूप कुटुम्ब भये तब तें॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितही॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी। द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी॥
नहिं मान पुरान न बेदहि जो। हरि सेवक संत सही कलि सो॥
कबिबृन्द उदार दुनी न सुनी। गुन दूषक ब्रात न कोपि गुनी॥
कलि बारहिं बार दुकाल परै। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै॥

सुनु खगेस कलि कपट हठ, दंभ द्वेष पाषंड।
मान मोह मारादि मद, ब्यापि रहे ब्रह्मण्ड॥
तामस धर्म करहिं नर, जप तप ब्रत मख दान।
देव न बरषहिं धरनी, बए न जामहि धान॥

अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा॥
सुख चाहहिं मूढ न धर्मरता। मति थोरि कठोरि न कोमलता॥

नर पीडित रोग न भोग कही। अभिमान बिरोध अकारन ही ॥
लघु जीवन सबतु पच दसा। कलपात न नाम गुमानु अमा ॥
कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा ॥
नहि तोष बिचारन सीतलता। सब जाति कुजाति भए मगता ॥
इरिषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता ॥
सब लोग बियोग बिसोक हए। बरनाश्रम धर्म अचार गए ॥
दम दान दया नहि जान पनी। जडता परबचनताऽति घनी ॥
तनु पोषक नारि नग सगरे। परनिंदक जे जग मो बगरे ॥

कलियुग के गुण

कृत जुग त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि, हरि नाम ते पावहिं लोग ॥

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरिध्यान तरहिं भव प्रानी ॥
त्रेता बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं ॥
द्वापर करि रघुपति पदपूजा। नर भव तरहि उपाय न दूजा ॥
कलिजुग केवल हरिगुन गाहा। गावत नर पावहि भव थाहा ॥
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना ॥
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुनग्रामहि ॥
सोइ भव तर कछु ससय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहि नहि पापा ॥

कलिजुग सम जुग आन नहिं, जौं नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल, भव तर बिनहि प्रयास ॥
प्रगट चारि पद धर्म के, कलिमहुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें, दान करइ कल्यान ॥

नित जुग धर्म होहिं सब केरे। हृदयँ राम माया के प्रेरे॥
सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना॥
सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा॥
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस॥
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँओरा॥
बुध जुग धर्म जानि मनमाहीं। तजि अधर्म रति धर्म कराहीं॥
काल धर्म नहिं ब्यापहिं ताही। रघुपति चरन प्रीति अति जाही॥
नटकृत बिकट कपट खगराया। नट सेवकहि न व्यापइ माया॥

हरि मायाकृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहि।
भजिअ राम तजि काम सब, अस बिचारि मनमाहिं॥

गुरु से शत्रुता करने की हानियाँ

जे सठ गुर सन इरिषा करही। रौरव नरक कोटि जुग परही॥
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा। अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा॥

शंकर जी की स्तुति

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं ब्यापक ब्रह्म वेदस्वरूपं॥
निज निर्गुणं निर्विकल्प निरीह। चिदाकाशमाकाशवास भजेऽहं॥
निराकारमोंकारमूल तुरीयं। गिराग्यान गोतीतमीशंगिरीश॥
कराल महाकालकालं कृपालं। गुणागारससारपारं नतोऽहं॥
तुषाराद्रिसंकाशगौर गभीरं। मनोभूतकोटिप्रभाश्री शरीरं॥
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगंगा। लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजगा॥
चलत्कुंडल भ्रू सुनेत्र विशालं। प्रसन्नानन नीलकठ दयाल॥
मृगाधीशचर्माम्बर मुण्डमाल। प्रियं शकरं सर्वनाथ भजामि॥
प्रचड प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं। अखंड अज भानुकोटिप्रकाशं॥

त्रयः शूलनिर्मूलनं शूलपाणिम्। भजेऽहं भवानी पतिं भावगम्यं ॥
कलातीतकल्याण कल्पान्तकारी। सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ॥
चिदानन्दसन्दोह मोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दं। भजंतीह लोके परे वा नराणां ॥
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां। नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम् ॥
जरा जन्म दुखौघतातप्यमानं। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो ॥

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नराभक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

ब्रह्म का स्वरूप

लागे करन ब्रह्म उपदेसा। अज अद्वैत अगुन हृदयेसा ॥
अकल अनीह अनाम अरूपा। अनुभव गम्य अखंड अनूपा ॥
मन गोतीत अमल अबिनासी। निर्बिकार निरवधि सुखरासी ॥
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा। बारि बीचि इव गावहि बेदा ॥

कुछ उपदेश

क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु, द्वैत कि बिनु अग्यान।
माया बस परिछिन्न जड़, जीव कि ईस समान ॥

कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें। तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें ॥
परद्रोही कि होहिं निःसंका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका ॥
बस कि रह द्विज अनहित कीन्हें। कर्म कि होहिं स्वरूपहि चीन्हें ॥
काहू सुमति कि खल सँग जामी। सुभगति पाव कि परत्रियगामी ॥
भव कि परहिं परमात्मा बिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ हरिनिंदक ॥
राजु कि रहइ नीति बिनु जानें। अघ कि रहहिं हरिचरित बखानें ॥
पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावइ कोई ॥

लाभु कि किछु हरिभगति समाना । जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना ॥
हानि कि जग एहि सम किछु भाई । भजिअ न रामहि नर तनु पाई ॥
अघ कि पिसुनता सम कछु आना । धर्म कि दया सरिस हरि जाना ॥

उमा जे रामचरन रत, बिगत काम मद क्रोध ।
निज प्रभुमय देखहि जगत, केहि सन करहिं बिरोध ॥

भक्ति की महिमा

भगति पच्छ हठ करि रहेउँ, दीन्हि महारिषि साप ।
मुनि दुर्लभ बर पायउँ, देखहु भजन प्रताप ॥

जे असि भगति जानि परिहरही । केवल ज्ञान हेतु श्रम करहीं ॥
ते जड़ कामधेनु गृहँ त्यागी । खोजत आकु फिरहिं पय लागी ॥
सुनु खगेस हरिभगति बिहाई । जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी । पैरि पार चाहहिं जड़ करनी ॥

ज्ञान और भक्ति का अन्तर

भगतिहि ज्ञानहि नहि कछु भेदा । उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर । सावधान सोउ सुनु बिहगवर ॥
ग्यान बिराग जोग बिग्याना । ए सब पुरुष सुनहु हरि जाना ॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती । अबला अबल सहज जड़जाती ॥

पुरुष त्यागि सक नारिहि, जो बिरक्त मति धीर ।
न तु कामी बिषयाबस, बिमुख जो पद रघुबीर ॥

माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ । नारिबर्ग जानइ सब कोऊ ॥
पुनि रघुबीरहि भगति पिआरी । माया खलु नर्तकी बिचारी ॥
भगतिहि सानुकूल रघुराया । ताते तेहि डरपति अति माया ॥
राम भगति निरुपम निरुपाधी । बसइ जासु उर सदा अबाधी ॥

तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकइ कछु निज प्रभुताई ॥
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी। जाचहिं भगति सकल सुख खानी ॥

यह रहस्य रघुनाथ कर, बेगि न जानइ कोइ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ, सपनेहुँ मोह न होइ ॥
औरउ ग्यान भगति कर, भेद सुनहु सुप्रबीन।
जो सुनि होइ रामपद, प्रीति सदा अबिछीन ॥

सुनहु तात यह अकथ कहानी। समुझत बनइ न जाइ बखानी ॥
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी ॥
सो मायाबस भयउ गोसाईं। बँध्यो कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि गई। जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥
तब ते जीव भयउ संसारी। छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥
श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई। छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥
जीव हृदय तम मोह बिसेषी। ग्रंथि छूट किमि परइ न देखी ॥
अस संजोग ईस जब करई। तबहुँ कदाचित सो निरुअरई ॥
सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई। जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आई ॥
जप तप ब्रत जम नियम अपारा। जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा ॥
तेहि तृन हरित चरै जब गाई। भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई ॥
नोइ निवृत्ति पात्र बिस्वासा। निर्मल मन अहीर निज दासा ॥
परम धर्ममय पय दुहि भाई। अवटै अनल अकाम बनाई ॥
तोष मरुत तब छमाँ जुड़ावै। धृति सम जावनु देइ जमावै ॥
मुदिताँ मथै बिचार मथानी। दम अधार रजु सत्य सुबानी ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता। बिमल बिराग सुभग सुपुनीता ॥

जोग अगिनि करि प्रगट तब, कर्म सुभासुभ लाइ।
बुद्धि सिरावै ग्यान घृत, ममता मल जरि जाइ ॥

तब बिग्यान रूपिनी, बुद्धि बिसद घृत पाइ।
चित्त दिआ भरि धरै दृढ, समता दिअट बनाइ ॥
तीनि अवस्था तीनि गुन, तेहि कपास तें काढि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि, बाती करै सुगाढि ॥
एहि बिधि लेसै दीप, तेज रासि बिग्यान मय।
जातहि जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब ॥

सोहमस्मि इति बृत्ति अखडा। दीपसिखा सोइ परम प्रचडा ॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा। तब भवमूल भेद भ्रमनासा ॥
प्रबल अबिद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटइ अपारा ॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजिआरा। उर गृहँ बैठि ग्रथि निरुआरा ॥
छोरन ग्रथि पाव जौ सोई। तब यह जीव कृतारथ होई ॥
छोरत ग्रथि जानि खगराया। बिघ्न अनेक करइ तब माया ॥
रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई। बुद्धिहि लोभ दिखावहि आई ॥
कल बल छल करि जाहि समीपा। अचल बात बुझावहि दीपा ॥
होइ बुद्धि जौ परम सयानी। तिन्ह तन चितव न अनहित जानी ॥
जौ तेहि बिघ्न बुद्धि नहिं बाधी। तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी ॥
इंद्री द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना ॥
आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देहि कपाट उघारी ॥
जब सो प्रभंजन उर गृहँ जाई। तबहिं दीप बिग्यान बुझाई ॥
ग्रथि न छूटि मिटा सो प्रकासा। बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा ॥
इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई। बिषय भोग पर प्रीति सदाई ॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि बिधि दीप को बार बहोरी ॥

तब फिरि जीव बिबिध बिधि, पावइ ससृति क्लेस।
हरि माया अति दुस्तर, तरि न जाइ बिहगेस ॥

कहत कठिन समुझत कठिन, साधत कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छरन्याय जौं, पुनि प्रत्यूह अनेक॥

ग्यान पथ कृपान कै धारा। परत खगेस होइ नहिं बारा॥
जो निर्बिघ्न पथ निर्बहई। सो कैवल्य परमपद लहई॥
अति दुर्लभ कैवल्य परमपद। संत पुरान निगम आगम बद॥
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अन इच्छित आवइ बरिआईं॥
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई। कोटि भाँति कोउ करै उपाई॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई। रहि न सकइ हरिभगति बिहाई॥
अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लुभाने॥
भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृति मूल अबिद्या नासा॥
भोजन करिअ तृपिति हित लागी। जिमि सो असन पचवै जठरागी॥
असि हरिभगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सोहाई॥

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिअ उरगारि।
भजहु रामपद पंकज, अस सिद्धान्त बिचारि॥
जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हि करइ चैतन्य।
अस समर्थ रघुनायकहि, भजहि जीव ते धन्य॥

भक्ति की महिमा

राम भगति चिंतामनि सुंदर। बसइ गरुड़ जाके उर अंतर॥
परम प्रकास रूप दिन राती। नहिं कछु चहिअ दिआ घृत बाती॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहिं ताहि बुझावा॥
प्रबल अबिद्यातम मिटि जाई। हारहिं सकल सलभ समुदाई॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसइ भगति जाके उर माहीं॥
गरल सुधासम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी॥

राम भगति मनि उर बस जाकें । दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जगमाहीं । जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई । रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई ॥
सुगम उपाय पाइबे केरे । नर हतभाग्य देहिं भट भेरे ॥
पावन पर्बत बेद पुराना । रामकथा रुचिरा कर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी । ग्यान बिराग नयन उरगारी ॥
भाव सहित खोजइ जो प्रानी । पाव भगति मनि सब सुख खानी ॥
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा । राम ते अधिक राम कर दासा ॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा । चंदन तरु हरि संत समीरा ॥
सब कर फल हरिभगति सुहाई । सो बिनु संत न काहूँ पाई ॥
अस बिचार जोइ कर सतसंगा । रामभगति तेहि सुलभ बिहंगा ॥

ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ग्यान संत सुर आहिं ।
कथा सुधा मथि काढहिं, भगति मधुरता जाहिं ॥
बिरति चर्म असि ग्यान मद, लोभ मोह रिपु मारि ।
जय पाइअ सो हरिभगति, देखु खगेस बिचारि ॥

परमार्थ के कुछ प्रश्न और उनके उत्तर

प्रथमहिं कहहु नाथ मति धीरा । सब ते दुर्लभ कवन सरीरा ॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी । सोउ संछेपहिं कहहु बिचारी ॥
संत असंत मरम तुम्ह जानहु । तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु ॥
कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला । कहहु कवन अघ परम कराला ॥
मानस रोग कहहु समुझाई । तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई ॥

नर तन सम नहिं कवनिउ देही । जीव चराचर जाचत तेही ॥
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी । ग्यान बिराग भगति सुभ देनी ॥

सो तनु धरि हरि भजहि न जे नर । होहिं बिषयरत मंद मदतर ॥
कांच किरिच बदलें ते लेहीं । कर ते डारि परस मनि देहीं ॥
नहि दरिद्र सम दुख जगमाहीं । संत मिलन सम सुख जग नाहीं ॥
पर उपकार बचन मन काया । संत सहज सुभाउ खगराया ॥
संत सहहिं दुख परहित लागी । परदुख हेतु असंत अभागी ॥
भूर्ज तरू सम संत कृपाला । परहित निति सह बिपति बिसाला ॥
सन इव खल पर बंधन करई । खाल कढाइ बिपति सहि मरई ॥
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी । अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥
पर संपदा बिनासि नसाहीं । जिमि ससि हति हिमउपल बिलाहीं ॥
दुष्ट उदय जग आरति हेतू । जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥
संत उदय संतत सुखकारी । बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी ॥
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा । परनिंदा सम अघ न गरीसा ॥
हर गुर निंदक दादुर होई । जन्म सहस्र पाव तन सोई ॥
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि । जग जनमइ बायस सरीर धरि ॥
सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी । रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥
होहिं उलूक संत निंदारत । मोहनिसा प्रिय ग्यान भानु गत ॥
सब कै निंदा जे जड़ करहीं । ते चमगादुर होइ अवतरहीं ॥
सुनहु तात अब मानसरोगा । जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा ॥
मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला । तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥
काम बात कफ लोभ अपारा । क्रोध पित्त नित छाती जारा ॥
प्रीति करहिं जो तीनिउ भाई । उपजइ सन्यपात दुखदाई ॥
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना । ते सब सूल नाम को जाना ॥
ममता दादु कंडु इरषाई । हरष बिषाद गरह बहुताई ॥
परसुख देखि जरनि सोइ छई । कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई ॥
अहंकार अति दुखद डमरुआ । दंभ कपट मद मान नेहरुआ ॥

तृस्ना उदर बृद्धि अति भारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी॥
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लगि कहौं कुरोग अनेका॥

एक ब्याधि बस नर मरहिं, ए असाधि बहु ब्याधि।
पीड़हिं सतत जीव कहुँ, सो किमि लहै समाधि॥

रामकृपा नासहिं सब रोगा। जौ एहि भाँति बनै सजोगा॥
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। सजम यह न बिषय कै आसा॥
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी॥
एहि बिधि भलेहि सो रोग नसाही। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाही॥
जानिअ तब मन बिरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिकाई॥
सुमति छुधा बाढइ नित नई। बिषय आस दुर्बलता गई॥
बिमल ग्यान जल जब सो नहाई। तब रह रामभगति उर छाई॥

रामभक्ति के बिना कोई तरता नहीं

सब कर मत खगनायक एहा। करिअ रामपद पकज नेहा॥
श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाही। रघुपति भगति बिना सुख नाही॥
कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। बन्ध्यासुत बरु काहुहि मारा॥
फूलहिं नभ बरु बहु बिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला॥
तृषा जाइ बरु मृगजलपाना। बरु जामहिं सस सीस बिषाना॥
अधकारु बरु रबिहि नसावै। रामबिमुख न जीव सुख पावै॥
हिम •ते अनल प्रगट बरु होई। बिमुख राम सुख पाव न कोई॥

बारि मथें घृत होइ बरु, सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरिभजन न भव तरिअ, यह सिद्धान्त अपेल॥
मसकहि करइ बिरचि प्रभु, अजहि मसक ते हीन।
अस बिचारि तजि संसय, रामहि भजहिं प्रबीन॥

इस कलिकाल में केवल रामनाम ही मुक्ति का देनेवाला है

एहि कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। सतत सुनिअ रामगुनग्रामहि॥
जासु पतितपावन बड़ बाना। गावहिं कवि श्रुति संत पुराना॥
ताहि भजहि मन तजि कुटिलाई। राम भजें गति केहि नहि पाई॥

मो सम दीन न दीनहित, तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंसमनि, हरहु बिषम भवभीर॥
कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहि राम॥

सूक्तियाँ

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहि चाहि।
चित्त खगेस राम कर, समुझि परइ कहु काहि॥

बड़े भाग पाइय सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भवभंगा॥

संत संग अपबर्ग कर, कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद, श्रुति पुरान सद्ग्रंथ॥

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा सम नहि अधमाई॥

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥

उपजइ रामचरन बिस्वासा। भव निधि तर नर बिनहि प्रयासा॥

तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहुकाल करिअ सतसंगा॥

काम क्रोध मद लोभरत, गृहासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं, मूढ परे तमकूप॥

सत बिसुद्ध मिलहिं परितेही। चितवहि राम कृपा करि जेही॥

यहाँ मोहकर कारन नाही। रवि सन्मुख तम कबहुँ कि जाही॥

परबस जीव स्वबस भगवता। जीव अनेक एक श्रीकन्ता॥

मुधा भेद जद्यपि कृत माया। बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया॥

हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। प्रभुप्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या॥

तातें नास न होइ दास कर। भेद भगति बाढ़ै बिहगवर॥

भगतिहीन गुन सुख सब ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे।

जदपि प्रथम दुख पावइ, रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नासि हित जननी, गनति न सो सिसु पीर॥
तिमि रघुपति निज दासकर, हरहिं मानहित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं, कस न भजहु भ्रम त्यागि॥

भावबस्य भगवान, सुखनिधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान, भजिअ सदा सीता रवन॥

गुर बिनु भवनिधि तरइ न कोई। जौ बिरचि संकर सम होई॥

जेहि तें कछु निज स्वारथ होई। तेहि पर ममता कर सब कोई॥

पन्नगारि असि नीति, श्रुतिसमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति, करिअ जानि निज परमहित॥

पाट कीट तें होइ, तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालइ सबु कोइ, परम अपावन प्रान सम॥

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा॥

सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा।

कबि कोबिद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती॥
उदासीन नित रहिअ गोसाईं। खल परिहरिअ स्वान की नाईं॥

जनमत मरत दुसह दुख होई। एहि स्वल्पउ नहि ब्यापिहि सोई॥

छमा सील जे पर उपकारी। तेहि द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी॥

सुनु प्रभु बहुत अवज्ञा किए। उपज क्रोध ज्ञानिहु के हिए॥

अति संघरषन जौ कर कोई। अनल प्रगट चंदन ते होई॥

जो इच्छा करिहहु मनमाहीं। हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं॥

संत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा॥

संत बिटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्ह कै करनी॥

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता। परदुख द्रवहिं सत सुपुनीता॥

सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा॥

श्रुति सिद्धान्त इहइ उरगारी। राम भजिअ सब काज बिसारी॥

सिव सेवा कर फल सुत सोई। अविरल भक्ति रामपद होई॥

गिरिजा संत समागम, सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो, गावहिं बेद पुरान॥

धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिव्रत अनुसरी॥
धन्य सो भूप नीति जो करई। धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई॥
सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत।
श्री रघुबीर परायन, जेहिं नर उपज बिनीत॥

फुटकर

अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिन्द अनुरागी॥

सुनत बचन बिसरे सब दूखा। तृषावत जिमि पाइ पियूषा॥

गहे भरत पुनि प्रभु पद पकज। नमत जिनहिं सुर मुनि सकर अज॥

कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं। चितवति कृपासिन्धु रन धीरहिं॥
हृदय बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लकापति मारा॥

मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहुँ ते मोहि अधिक पियारे ॥

करहिं आरती आरतहर कें। रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें ॥

भरत भाग्य प्रभु कोमलताई। सेष कोटि सत सकहि न गाई ॥

भव बन्धन ते छूटही, नर जपि जाकर नाम।
खर्व निसाचर बाँधेउ, नागपास सोइ राम ॥

सिव बिरंचि कहँ मोहइ, को है बपुरा आन।
अस जिय जानि भजहि मुनि, मायापति भगवान ॥

जो अति आतप ब्याकुल होई। तरुछाया सुख जानै सोई ॥

जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहु न पावा ॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा ॥

राकापति षोड़स उअहिं, तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइय, बिनु रबि राति न जाइ ॥

ऐसेहिं बिनु हरि भजन खगेसा। मिटइ न जीवन केर कलेसा ॥

जप तप मख सम दम ब्रत दाना। बिरति बिवेक जोग बिग्याना ॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा। तेहि बिनु कोउ न पावइ छेमा ॥

स्वारथ सर्व जीव कहँ एहा। मन क्रम बचन रामपद नेहा ॥

जेहि ते नीच बड़ाई पावा। सो प्रथमहि हति ताहि नसावा ॥

इन्द्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरि चक्र कराला ॥
जो इन्हकर मारा नहिं मरई। बिप्रद्रोह पावक सो जरई ॥

भगतिहिं ग्यानहिं नहि कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥

विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽति दुस्तरं तरन्ति ते ॥

अस सुभाव कहुँ सुनउँ न देखउँ। केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥

सुनहु राम कर सहज स्वभाऊ। जन अभिमान न राखहि काऊ ॥
संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोकदायक अभिमाना ॥
ताते करहिं कृपानिधि दूरी। सेवक पर ममता अति भूरी ॥
जिमि सिसु तन ब्रण होइ गुसाईं। मातु चिराव कठिन की नाईं ॥
सो सुख जानइ मन अरु काना। नहिं रसना पहि जाइ बखाना ॥
प्रभु सोभा सुख जानहिं नयना। कहि किमि सकहिं तिन्हहि नहि बयना ॥
साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी। कबि कोबिद कृतग्य सन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी। धर्म निरत पंडित बिग्यानी ॥
तरहिं न बिनु सेएँ मम स्वामी। राम नमामि नमामि नमामी ॥

मोरे तुम प्रभु गुरु पितु माता। जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता ॥

संत बिटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्ह कै करनी ॥

जहँ लगि साधन बेद बखानी। सब कर फल हरि भगति भवानी।
सो रघुनाथ भगति श्रुति गाई। रामकृपा काहू एक पाई॥

मुनिदुर्लभ हरि भगति नर, पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर, सुनहिं मानि बिस्वास॥

सोइ सर्वग्य गुनी सोइ ग्याता। सोइ महि मंडित पंडित दाता॥
धर्मपरायन सोइ कुल त्राता। रामचरन जाकर मन राता॥
नीति निपुन सोइ परम सयाना। श्रुति सिद्धांत नीक तेहिं जाना॥
सोइ कबि कोबिद सोइ रनधीरा। जो छल छाँड़ि भजइ रघुबीरा॥
सो धन धन्य प्रथम गति जाकी। धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी॥
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा। धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा॥

यह न कहिय सठ ही हठ सीलहिं। जो मन लाइ न सुन हरि लीलहि॥
कहिय न लोभिहि क्रोधिहि कामिहि। जो न भजइ सचराचर स्वामिहि॥
द्विज द्रोहिहि न सुनाइअ कबहूँ। सुरपति सरिस होइ नृप जबहूँ॥

रामकथा के तेइ अधिकारी। जिन्हकें सतसंगति अतिप्यारी॥
गुरुपद प्रीति नीति रत जेई। द्विज सेवक अधिकारी तेई॥
ता कहँ यह बिसेषि सुखदाई। जाहि प्रान प्रिय श्री रघुराई॥
रामचरन रति जो चह, अथवा पद निर्बान।
भाव सहित सो यह कथा, करउ श्रवन पुट पान॥

पाई न गति केहि पतितपावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना॥

आभीर जमन किरात खस श्वपचादि अति अघ रूप जे।
कहि नाम बारक तेऽपि पावन होहिं राम नमामि ते ॥१॥

रघुबस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावही।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम रामधाम सिधावही॥
सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरैं।
दारुन अबिद्या पच जनित बिकार श्री रघुवर हरै॥२॥

सुन्दर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकाम हित निर्वानप्रद सम आन को॥
जाकी कृपा लवलेस ते मतिमन्द तुलसीदास हूँ।
पायो परमबिश्राम राम समान प्रभु नाही कहूँ॥३॥

वेदों-द्वारा स्तुति

जै सगुण निर्गुणरूप रूपअनूप भूप सिरोमने।
दसकधरादि प्रचड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने॥
अवतार नर ससारभार बिभजि दारुनदुख दहे।
जै प्रनतपाल दयालु प्रभु सजुक्तसक्ति नमामहे॥१॥

तव बिषम मायाबस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भवपंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुख ते निर्बहे।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥२॥

जे ग्यान मान बिमत्त तव भवहरनि भगति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भवनाथ सो समरामहे॥३॥

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी ।
नखनिर्गता मुनि बन्दिता त्रैलोक पावन सुरसरी ॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटककिन लहे ।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे ॥४॥
अव्यक्त मूल मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।
षटकंध साखा पचबीस अनेक पर्न सुमन घने ॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर वेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे ।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे ॥५॥
जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं ।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सद्गुनाकर देव यह बर मागहीं ।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥६॥

विनय-पत्रिका

गाइये गनपति जग बन्दन । सकर-सुवन - भवानी-नन्दन ॥१॥
सिद्धि-सदन, गजबदन, विनायक । कृपा-सिधु, सुन्दर सब लायक ॥२॥
मोदक-प्रिय मुद - मगल - दाता । विद्या-वारिधि, बुद्धि-विधाता ॥३॥
मॉगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥४॥

बावरो रावरो नाह भवानी ।
दानि बड़ो दिन, देत दये बिनु, बेद-बड़ाई भानी ॥१॥
निज घर की वरबात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी ।
सिव की दई सम्पदा देखत, श्री-सारदा सिहानी ॥२॥
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुख की नही निसानी ।
तिन रकन को नाक सँवारत, हौ आयो नकबानी ॥३॥
दुखी दीनता दुखियन के दुख, जाचकता अकुलानी ।
यह अधिकार सौपिये औरहि, भीख भली मै जानी ॥४॥
प्रेम-प्रससा-बिनय-ब्यगजुत, सुनि बिधि की बरबानी ।
तुलसी मुदित महेस मनहि मन, जगत-मातु मुसुकानी ॥५॥

कबहुँक अम्ब, अवसर पाइ ।
मेरिऔ सुधि द्याइबी, कछु करुन-कथा चलाइ ॥१॥
दीन सब अँगहीन छीन मलीन अघी अघाइ ।
नाम लै भरै उदर एक प्रभु-दासी-दास कहाइ ॥२॥

बूझि है 'सो है कौन', कहिबी नाम दसा जनाइ ।
सुनत रामकृपालु के मेरी बिगरिऔ बनि जाइ ॥२॥

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजुमन हरन भवभय दारुन ।
नवकंज-लोचन, कंजमुख, करकंज, पद कंजारुन ॥१॥
कंदर्प अगनित-अमित-छवि, नवनील नीरद सुन्दर ।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि सुचि नौमि जनक - सुतावर ॥२॥
भजु दीनबन्धु दिनेस दानव - दैत्य - बंस - निकंदन ।
रघुनंद आनँदकंद कोसलचन्द दसरथ-नन्दन ॥३॥
सिर मुकुट, कुंडल तिलक चारु, उदारु अंग बिभूषन ।
आजानुभुज, सर - चाप - धर, संग्राम-जित-खरदूषन ॥४॥
इति वदति तुलसीदास संकर-सेष-मुनि-मन-रंजन ।
मम हृदय-कंज निवास करु, कामादि-खल-दल-गंजन ॥५॥

सुन मन मूढ ! सिखावन मेरो ।
हरिपद-बिमुख लह्यो न काहु सुख, सठ यह समुझ सवेरो ॥१॥
बिछुरे ससि रबि मन नैननि तें, पावत दुख बहुतेरो ।
भ्रमत स्रमित निसि-दिवस गगनमहँ, तहँ रिपु राहु बड़ेरो ॥२॥
जद्यपि अति पुनीत सुरसरिता, तिहुँ पुर सुजस घनेरो ।
तजे चरन अजहूँ न मिटत नित, बहिबो ताहू केरो ॥३॥
छुटै न बिपति भजे बिनु रघुपति, स्रुत सन्देह निबेरो ।
तुलसिदास सब आस छाँड करि, होहु राम कर चेरो ॥४॥

राम राम रटु, राम राम रटु राम राम जपु जीहा ।
रामनाम-नवनेह-मेह को, मन ! हठि होहि पपीहा ॥१॥

सब साधन-फल कूप-सरित-सर-सागर सलिल निरासा ।
रामनाम-रति स्वाति सुधा सुभ-सीकर प्रेम पियासा ॥२॥
गरजि तरजि पाषान बरषि पबि, प्रीति परखि जिय जानै ।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥३॥
रामनाम गति, रामनाम मति, रामनाम अनुरागी ।
ह्वै गये है, जे होहिंगे, त्रिभुवन तेइ गनियत बड़भागी ॥४॥
एक अंग मग अगम गवन कर, बिलमु न छिन छिन छाहै ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि, निरुपधि नेम निबाहै ॥५॥

तू दयाल, दीन हौ, तू दानि, हौ भिखारी ।
हौ प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी ॥१॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो ?
मो समान आरत नहिं, आरति हर तोसो ॥२॥
ब्रह्म तू, हौ जीव, तू ठाकुर, हौ चेरो ।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब बिधि हितु मेरो ॥३॥
तोहि मोहिं नाते अनेक मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु ! चरन सरन पावै ॥४॥

कबहूँ मन विश्राम न मान्यो ।
निसदिन भ्रमत बिसारि सहज सुख, जहँ तहँ इन्द्रिन तान्यो ॥१॥
जदपि बिषय सँग सह्यो दुसह दुख, बिषम जाल अरुझान्यो ।
तदपि न तजत मूढ़, ममताबस, जानत हूँ नहिं जान्यो ॥२॥
जन्म अनेक किये नाना बिधि कर्म-कीच चित सान्यो ।
होइ न बिमल बिबेक-नीर-बिनु, बेद पुरान बखान्यो ॥३॥

निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों, हरषि हृदय नहिं आन्यो ।
तुलसिदास कब तृषा जाय, सर खनतहिं जनम सिरान्यो ॥४॥

मेरो मन हरिजू ! हठ न तजै ।
निसदिन नाथ ! देउँ सिख बहुबिधि, करत सुभाउ निजै ॥१॥
ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खलपतिहि भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत गृह पसु ज्यों जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ लजै ॥३॥
हौं हारयो करि जतन बिबिध बिधि अतिसै प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहि जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥४॥

ऐसी मूढता या मन की ।
परिहरि राम-भक्ति-सुरसरिता आस करत ओसकन की ॥१॥
धूम-समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घन की ।
नहि तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होत लोचन की ॥२॥
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़, छाँह आपने तन की ।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की ॥३॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि, जानत हौ गति जन की ।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की ॥४॥

नाचत ही निसि दिवस मरयो ।
तब ही तें न भयो हरि ! थिर जब तें जिव नाम धरयो ॥१॥
बहु बासना बिबिध कचुकि भूषण लोभादि भरयो ।
चर अरु अचर गगन जल थल में, कौन न स्वाँग करयो ॥२॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज नहि, जाँचत कोउ उबरयो।
मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख, काहू तो न हरयो ॥३॥
थके नयन पद पानि सुमति बल, संग सकल बिछुरयो।
अब रघुनाथ! सरन आयो जन, भव-भय बिकल डरयो ॥४॥
जेहि गुन तें बस होहु रीझिकरि, सो मोहि सब बिसरयो।
तुलसिदास निज भवन-द्वार प्रभु, दीजै रहन परयो ॥५॥

माधव जू! मो सम मन्द न कोऊ।
जद्यपि मीन पतंग हीनमति, मोहि नहि पूजैं ओऊ ॥१॥
रुचिर रूप-आहार-बस्य उन्ह, पावक लोह न जान्यो।
देखत बिपति बिषय न तजत हौं, तातें अधिक अजान्यो ॥२॥
महा मोह-सरिता अपार महँ, सतत फिरत बह्यो।
श्री हरि-चरन-कमल नौका तजि, फिर फिर फेन गह्यो ॥३॥
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति, ज्यौं भरि मुख पकरै।
निज तालूगत रुधिर पान करि, मन संतोष धरै ॥४॥
जलचर-वृन्द-जाल-अन्तरगत होत सिमिट इक पासा।
एकहि एक खात लालच-बस, नहि देखत निज नासा ॥५॥
मेरे अघ सारद अनेक जुग, गनत पार नहिं पावै।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै ॥६॥

हरि, तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों।
साधन-धाम बिबुध-दुरलभ तन, मोहिं कृपा करि दीन्हों ॥१॥
कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभु के, एक एक उपकार।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं, दीजै परम उदार ॥२॥

बिषय-बारि मन-मीन भिन्न नहि, होत कबहुँ पल एक।
ताते सहौं बिपति अति दारुन, जनमत जोनि अनेक ॥३॥
कृपा डोरि, बनसी पद-अंकुस, परमप्रेम मृदु चारो।
एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥४॥
है स्रुति विदित उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै।
तुलसिदास यहि जीव मोह-रजु, जोइ बाँध्यो सोइ छोरै ॥५॥

जानकी जीवन की बलि जैहौं।
चित कहै, राम सीय-पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहौं ॥१॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु-पद-बिमुख न पैहौं।
मन समेत या तनु के बासिन्ह इहै सिखावन दैहौं ॥२॥
स्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और न गैहौं।
रोकिहौं नैन बिलोकत औरहिं सीस ईस ही नैहौं ॥३॥
नातो नेह नाथ सों करि, सब नातो नेह बहैहौं।
या छर भार ताहि तुलसी जग, जाको दास कहैहौं ॥४॥

अब लौं नसानी, अब न नसैहौं।
रामकृपा भव-निसा सिरानी, जागे पुनि न डसैहौं ॥१॥
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर करते न खसैहौं।
स्यामरूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसैहौं ॥२॥
परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुकर पन कै तुलसी, रघुपति-पद-कमल बसैहौं ॥३॥

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ।
काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥१॥
कौने देव बराइ बिरद-हित, हठि हठि अधम उधारे ।
खग, मृग, ब्याध, पषान, बिटप जड़, जवन कवन सुर तारे ॥२॥
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज, सब, माया-बिबस बिचारे ।
तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥३॥

केसव कहि न जाइ का कहिये ।
देखत तव रचना बिचित्र अति, समुझि मनहि मन रहिये ॥१॥
सून्य भीति पर चित्र, रग नहिं, तनु बिनु लिखा चितेरे ।
धोये मिटै न मरे भीति, दुख पाइय इहि तनु हेरे ॥२॥
रबिकर-नीर बसै अति दारुन, मकर रूप तेहि माहीं ।
बदन-हीन सो ग्रसै चराचर, पान करन जे जाहीं ॥३॥
कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मानै ।
तुलसिदास परिहरै तीन भ्रम, सो आपन पहिचानै ॥४॥

माधव असि तुम्हार यह माया ।
करि उपाय पचि मरिय, तरिय नहि, जब लगि करहु न दाया ॥१॥
सुनिय, गुनिय, समुझिय, समुझाइय, दसा हृदय नहिं आवै ।
जेहि अनुभव बिनु मोह जनित भव, दारुन बिपति सतावै ॥२॥
ब्रह्म पियूष मधुर सीतल जो, पै मन सो रस पावै ।
तौ कत मृगजल-रूप बिषय, कारन निसिबासर धावै ॥३॥
जेहि के भवन बिमल चिन्तामनि, सो कत काँच बटोरै ।
सपने परबस परै जागि, देखत केहि जाइ निहोरै ॥४॥

ग्यान भक्ति साधन अनेक, सब सत्य, झूठ कछु नाहीं।
तुलसिदास हरिकृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मन माहीं ॥५॥

हे हरि, कवन दोष तोहि दीजै।
जेहि उपाय सपनेहुँ दुरलभ गति, सोइ निसिबासर कीजै ॥१॥
जानत अर्थ अनर्थ-रूप, तमकूप परब यहि लागे।
तदपि न तजत स्वान अज खर ज्यों, फिरत विषय अनुरागे ॥२॥
भूत द्रोहकृत मोहबस्य हित, आपन मैं न बिचारो।
मद-मत्सर-अभिमान ग्यान रिपु, इन महँ रहनि अपारो ॥३॥
बेद-पुरान सुनत समुझत, रघुनाथ सकल जग व्यापी।
बेधत नहिं श्रीखंड बेनु इव, सारहीन मन पापी ॥४॥
मैं अपराध-सिंधु, करुनाकर! जानत अन्तरजामी।
तुलसिदास भव-व्याल ग्रसित तव, सरन उरग-रिपु गामी ॥५॥

जौ निज मन परिहरै बिकारा।
तौ कत द्वैत-जनित संसृति दुख, संसय सोक अपारा ॥१॥
सत्रु मित्र मध्यस्थ तीनि ये, मन कीन्हें बरियाईं।
त्यागन गहन उपेच्छनीय, अहि हाटक तृन की नाईं ॥२॥
असन, बसन, पसु वस्तु विविध विधि, सब मनि महँ रह जैसे।
सरग नरक चर अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे ॥३॥
बिटप-मध्य पुतरिका सूत महँ, कंचुकि बिनहिं बनाये।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाये ॥४॥
रघुपति-भक्ति-बारि छालित चित, बिनु प्रयास ही सूझै।
तुलसिदास कह चिद-बिलास जग, बूझत बूझत बूझै ॥५॥

सुनहु राम रघुबीर गुसाईं, मन अनीति-रत मेरो ।
चरन-सरोज बिसारि तिहारे, निसिदिन फिरत अनेरो ॥१॥
मानत नाहिं निगम-अनुसासन, त्रास न काहू केरो ।
भूल्यो सूल करम-कोलुन्ह तिल, ज्यों बहु बारनि पेरो ॥२॥
जहँ सतसग, कथा माधव की, सपनेहुँ करत न फेरो ।
लोभ-मोह-मद-काम-कोह रत तिन्ह सों प्रेम घनेरो ॥३॥
पर-गुन सुनत दाह, पर-दूषन सुनत हरष बहुतेरो ।
आप पाप को नगर बसावत सहि न सकत पर खेरो ॥४॥
साधन फल स्रुति-सार नाम तव, भव सरिता कहँ बेरो ।
सो पर-कर काँकिनी लागि सठ, बैंचि होत हठ चेरो ॥५॥
कबहुँक हौ सगति सुभाव तें, जाउँ सुमारग नेरो ।
तब करि क्रोध सग कुमनोरथ, देत कठिन भट भेरो ॥६॥
इक हौ दीन मलीन हीनमति, बिपति-जाल अति घेरो ।
तापर सहि न जाय करुनानिधि, मन को दुसह दरेरो ॥७॥
हारि परयो करि जतन बहुत बिधि, तातें कहत सबेरो ।
तुलसिदास यह त्रास मिटै जब, हृदय करहु तुम डेरो ॥८॥

मै हरि, पतित-पावन सुने ।
मै पतित तुम पतित-पावन दोउ बानक बने ॥१॥
ब्याध गनिका गज अजामिल साखि निगमनि भने ।
और अधम अनेक तारे जात कापै गने ॥२॥
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक जमपुर मने ।
दास तुलसी सरन आयो राखिये अपने ॥३॥

ऐसो को उदार जग माहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ॥१॥
जो गति जोग बिराग जतन करि नहि पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सबरी कहँ प्रभु न बहुत जिय जानी ॥२॥
जो संपति दससीस अरपि करि रावन सिव पहँ लीन्ही ।
सो संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्ही ॥३॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो ।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करैं कृपानिधि तेरो ॥४॥

माधव मोह-पास क्यों टूटै ।
बाहर कोटि उपाय करिय अभ्यन्तर ग्रन्थि न छूटै ॥१॥
घृत पूरन कराह अन्तरगत, ससि-प्रतिबिम्ब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाय कल्पसत, औटत नास न पावै ॥२॥
तरु कोटर महँ बस बिहँग, तरु काटे मरै न जैसे ।
साधन करिय विचार-हीन-मन, सुद्ध होइ नहि तैसे ॥३॥
अतर मलिन, बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ।
मरइ न उरग अनेक जतन, बलमीकि बिबिध विधि मारे ॥४॥
तुलसिदास हरि-गुरु-करुना बिनु, बिमल बिबेक न होई ।
बिनु बिबेक संसार घोर-निधि, पार न पावै कोई ॥५॥

जो पै राम-चरन-रति होती ।
तौ कत त्रिबिध सूल निसिबासर, सहते बिपति निसोती ॥१॥
जो सन्तोष-सुधा निसिबासर, सपनेहुँ कबहुँक पावै ।
तौ कत बिषय बिलोकि झूँठ जल, मन-कुरग ज्यों धावै ॥२॥

जो श्रीपति-महिमा बिचारि उर, भजते भाव बढाए ।
तौ कत द्वार द्वार कूकर ज्यों, फिरते पेट खलाए ॥३॥
जे लोलुप भये दास आस के, ते सब ही के चेरे ।
प्रभु बिस्वास आस जीती जिन्ह, ते सेवक हरि केरे ॥४॥
नहि एकौ आचरन भजन को, बिनय करत हौ ताते ।
कीजै कृपा दास तुलसी पर, नाथ नाम के नाते ॥५॥

रघुपति-भगति करत कठिनाई ।
कहत सुगम, करनी अपार, जानै सोइ जेहि बनि आई ॥१॥
जो जेहि कला कुसल ताकहँ सोइ, सुलभ सदा सुखकारी ।
सफरी सन्मुख जल-प्रबाह, सुरसरी बहै गज भारी ॥२॥
ज्यों सर्करा मिलै सिकतामहँ, बल तें न कोउ बिलगावै ।
अति रसग्य सूच्छम पिपीलिका, बिनु प्रयास ही पावै ॥३॥
सकल दृश्य निज उदर मेलि, सोवै निद्रा तजि जोगी ।
सोइ हरिपद अनुभवै परम सुख, अतिसय द्वैत-बियोगी ॥४॥
सोक मोह भय हरष दिवस-निसि, देस-काल तहँ नाही ।
तुलसिदास यहि दसाहीन, सशय निरमूल न जाही ॥५॥

जो मोहिं राम लागते मीठे ।
तौं नव-रस, षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥१॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि, अनुभवे सुने अरु डीठे ।
यह जानत हौ हृदय आपने, सपने न अघाइ उबीठे ॥२॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहि बल, बचन कहत अति ढीठे ।
नाम की लाज राम करुनाकर, केहि न दिये कर चीठे ॥३॥

यों मन कबहूँ तुमहि न लाग्यो ।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरंतर, रहत बिषय अनुराग्यो ॥१॥
ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर घर के ।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निर्मल गुनगन रघुबर के ॥२॥
ज्यों नासा सुगंधरस-बस, रसना षटरस-रति मानी ।
रामप्रसाद-माल, जूठनि लगि, त्यों न ललकि ललचानी ॥३॥
चंदन चंद्रबदनि भूषन पट, ज्यों चह पाँवर परस्यो ।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परस को तनु पातकी न तरस्यो ॥४॥
ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर, सेये बपु बचन हिये हूँ ।
त्यों न राम सुकृतग्य जे सकुचत, सकृत प्रनाम किये हूँ ॥५॥
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप, द्वार-द्वार जग बागे ।
राम-सीय-आस्रमनि चलत त्यों, भये न स्रमित अभागे ॥६॥
सकल अंग पद-बिमुख नाथ मुख, नाम की ओट लई है ।
है तुलसिहि परतीति एक, प्रभु-मूरति कृपामई है ॥७॥

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्री रघुनाथ-कृपाल कृपा तें, संत-स्वभाव गहौंगो ॥१॥
जथालाभ संतोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो ।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम, बचन नेम निबहौंगो ॥२॥
परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौंगो ।
बिगत मान, सम सीतल मन, पर गुन, नहिं दोष कहौंगो ॥३॥
परिहरि देह-जनित चिन्ता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि, अबिचल हरि-भक्ति लहौंगो ॥४॥

नाहिन आवत आन भरोसो ।
यहि कलिकाल सकल साधन तरु, है स्रम-फलनि फरो सो ॥१॥
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख जेहि जो रुचै करो सो ।
पायेहि पै जानिबो करम-फल, भरि भरि बेद परोसो ॥२॥
आगम-बिधि जप-जाग करत नर, सरत न काज खरो सो ।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि-साधन, रोग बियोग धरो सो ॥३॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह मिलि ग्यान बिराग हरो सो ।
बिगरत मन सन्यास लेत, जल नावत आम घरो सो ॥४॥
बहु मत सुनि बहु पंथ पुराननि, जहाँ तहाँ झगरो सो ।
गुरु कह्यो राम-भजन नीको मोहि, लगत राज-डगरो सो ॥५॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरो सो ।
रामनाम बोहित भव-सागर, चाहै तरन तरो सो ॥६॥

जाके प्रिय न राम-बैदेही ।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज-बनितनि, भये मुद-मंगलकारी ॥२॥
नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परमहित, पूज्य प्रान ते प्यारो ।
जासों होय सनेह रामपद, एतो मतो हमारो ॥४॥

जो पै रहनि राम सों नाहीं ।
तौ नर खर कूकर सूकर सम, बृथा जियत जग माहीं ॥१॥

काम, क्रोध, मद, लोभ, नींद, भय, भूख, प्यास सबही के।
मनुज देह सुर साधु सराहत, सो सनेह सिय-पी के ॥२॥
सूर, सुजान, सुपूत, सुलच्छन गनियत गुन गरुआई।
बिनु हरिभजन इँनारुन के फल तजत नहीं करुआई ॥३॥
कीरति, कुल, करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने।
तुलसी प्रभु-अनुराग-रहित जस, सालन साग अलोने ॥४॥

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय मानि जानि डरिये ॥१॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये।
जाते बिपति-जाल निसदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये ॥२॥
जानत हूँ मन बचन करम, पर-हित कीन्हें तरिये।
सो विपरीत देखि परसुख, बिनु कारन ही जरिये ॥३॥
स्रुति पुरान सब को मत यह, सतसंग सुदृढ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षाबस, तिनहि न आदरिये ॥४॥
सतत सोइ प्रिय मोहिं सदा, जातें भवनिधि परिये।
कहौ अब नाथ, कौन बल तें, संसार-सोक हरिये ॥५॥
जब कब निज करुना सुभाव ते, द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहि, कत पचि पचि मरिये ॥६॥

ताहि ते आयो सरन सबेरे।
ग्यान बिराग भगति साधन कछु, सपनेहुँ नाथ न मेरे ॥१॥
लोभ मोह मद काम क्रोध रिपु, फिरत रैन दिन घेरे।
तिनहिं मिले मन भयो कुपथ-रत, फिरै तिहारेहि फेरे ॥२॥

दोष निलय यह बिषय सोक-प्रद, कहत संत स्रुति टेरे।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति, सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥३॥
बिष पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम सम ईस कृपालु परमहित, पुनि न पाइहौ हेरे ॥४॥
यह जिय जानि रहौ सब तजि, रघुबीर भरोसे तेरे।
तुलसिदास यह बिपति बाँगुरो, तुमहि सो बनै निबेरे ॥५॥

मै तोहिं अब जान्यो संसार।
बाँधि न सकहि मोहि हरि के बल, प्रगट कपट-आगार ॥१॥
देखत ही कमनीय, कछू नाहिन पुनि कियो बिचार।
ज्यों कदली तरु-मध्य निहारत, कबहुँ न निकसत सार ॥२॥
तेरे लियें जनम अनेक मैं, फिरत न पायो पार।
महामोह-मृगजल-सरिता महँ, बोरयो हौ बारहिं बार ॥३॥
सुनु खल, छल बल कोटि किये बरु होहिं न भगत उदार।
सहित सहाय तहाँ बसि अब, जेहि हृदय न नंदकुमार ॥४॥
तासों करत चातुरी जो नहिं जानै मरम तुम्हार।
सो परि डरै मरै रजु-अहि तें, बूझै नहिं ब्यवहार ॥५॥
निज हित सुनु सठ, हठ न करहि जो चहहि कुसल परिवार।
तुलसिदास प्रभु के दासनि तजि, भजहि जहाँ मद मार ॥६॥

मन पछितैहै अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, बचन अरु हीते ॥१॥
सहसबाहु दसबदन आदि नृप, बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते ॥२॥

सुत बनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते।
अंतहुँ तोहिं तजैंगे पामर! तू न तजै अबही ते ॥३॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ, बिषय-भोग बहु घी ते ॥४॥

काज कहा नर तनु धरि सार्‌यो।
पर-उपकार सार स्रुति को जो, सो धोखेहु न बिचार्‌यो ॥१॥
द्वैत मूल, भय सूल, सोक फल, भवतरु टरै न टार्‌यो।
राम भजन-तीछन कुठार लै, सो नहि काटि निवार्‌यो ॥२॥
संसय-सिंधु नाम-बोहित भजि, निज आतमा न तार्‌यो।
जनम अनेक बिबेकहीन बहु, जोनि भ्रमत नहि हार्‌यो ॥३॥
देखि आन की सहज संपदा, द्वेष-अनल मन जार्‌यो।
सम दम दया दीन-पालन, सीतल हिय हरि न सभार्‌यो ॥४॥
प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति तैं, मन क्रम बचन बिसार्‌यो।
तुलसिदास यहि आस सरन, राखिहि जेहि गीध उधार्‌यो ॥५॥

जौ मन भज्यो चहै हरि-सुरतरु।
तौ तजि विषय-बिकार, सार भजु, अजहूँ जो मै कहौं सोइ करु ॥१॥
सम, संतोष, बिचार बिमल अति, सतसंगति, ये चारि दृढ़ करि धरु।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद, राग द्वेष निसेष करि परिहरु ॥२॥
स्रवन कथा, मुख नाम, हृदय हरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुसरु।
नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि, अगजगरूप भूप सीतावरु ॥३॥
इहै भगति बैराग्य ग्यान यह, हरि-तोषन यह सुभ ब्रत आचरु।
तुलसिदास सिव-मत मारग यहि, चलत सदा सपनेहुँ नाहिन डरु ॥४॥

भरोसो जाहि दूसरो सो करो ।

मोको तो राम को नाम कलपतरु, कलि कल्यान फरो ॥१॥
करम, उपासन, ग्यान, बेदमत सो सब भाँति खरो ।
मोहि तो "सावन के अंधहिं" ज्यों, सूझत रंग हरो ॥२॥
चाटत रह्यों स्वान पातरि ज्यों, कबहुँ न पेट भरो ।
सो हौ सुमिरत नाम सुधारस, पेखत परुसि धरो ॥३॥
स्वारथ औ परमारथ हू को, नहि 'कुंजरो नरो' ।
सुनियत सेतु पयोधि पषाननि, करि कपि-कटक तरो ॥४॥
प्रीति-प्रतीति जहाँ जाकी, तहँ ताको काज सरो ।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर, हौं सिसु-अरनि अरो ॥५॥
संकर साखि जो राखि कहौं कछु, तौ जरि जीह गरो ।
अपनो भलो राम-नामहिं तें, तुलसिहिं समुझि परो ॥६॥

काहे न रसना, रामहि गावहि ?

निसदिन पर-अपवाद बृथा कत, रटि रटि राग बढावहि ॥१॥
नर मुख सुन्दर मन्दिर पावन, बसि जनि ताहि लजावहि ।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत, रबिकर-जल कहँ धावहि ॥२॥
काम-कथा कलि-कैरव-चंदिनि, सुनत स्रवन दै भावहिं ।
तिनहि हटकि कहि हरि-कल-कीरति, करन-कलक नसावहि ॥३॥
जातरूप-मति जुगुति रुचिर मनि, रचि रचि हार बनावहि ।
सरन-सुखद रबिकुल-सरोज-रबि, राम नृपहिं पहिरावहि ॥४॥
बाद-बिबाद-स्वाद तजि भजि, हरि सरस चरित चित लावहि ।
तुलसिदास भवतरहि, तिहूँ पुर तू पुनीत जस पावहि ॥५॥

मोहि मूढ़ मन बहुत बिगोयो ।
याके लिये सुनहु करुनामय, मैं जग जनमि जनमि दुख रोयो ॥१॥
सीतल मधुर पियूष सहज सुख, निकटहि रहत दूरिजनु खोयो ।
बहु भाँतिन स्रम करत मोहबस, बृथहि मंदमति बारि बिलोयो ॥२॥
करम-कीच जिय जानि सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो ।
तृषावत सुरसरि बिहाय सठ, फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ॥३॥
तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब, मैं निज दोष कछु नहि गोयो ।
डासत ही गई बीति निसा सब, कबहुं न नाथ ' नीद भरि सोयो ॥४॥

जानकी जीवन की बलि जैहौं ।
चित कहै राम सीय पद परिहरि, अब न कहूँ चलि जैहौं ॥१॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुं सुख, प्रभु पद बिमुख न पैहौं ।
मन-समेत या तन के बासिन्ह, इहै सिखावन दैहौं ॥२॥
श्रवननि और कथा नहि सुनिहौं, रसना और न गैहौं ।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहि, सीस ईस ही नैहौं ॥३॥
नातो नेह नाथ सो करि, सब नातो नेह बहैहौं ।
यह छर भार ताहि तुलसी जग, जाको दास कहैहौं ॥४॥

ऐसे राम दीन हितकारी ।
अति कोमल करुनानिधान, बिनु कारण पर-उपकारी ॥१॥
साधनहीन दीन निज अघ बस, सिला भई मुनि नारी ।
गृह तें गवनि परसि पद पावन, घोर साप तें तारी ॥२॥
हिंसारत निषाद तामस बपु, पसु-समान बनचारी ।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस, नहि कछु जात बिचारी ॥३॥

जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत, कहि न जाय अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोक हत, सरन गए भय टारी ॥४॥
बिहग जोनि आमिष अहार पर, गीध कौन ब्रतधारी।
जनक-समान क्रिया ताकी निज कर सब भांति सँवारी ॥५॥
अधम जाति सबरी जोषित जड़, लोक बेद तें न्यारी।
जानि प्रीति दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उधारी ॥६॥
कपि सुग्रीव बन्धु-भय-व्याकुल, आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जन के, हत्यो बालि सहिगारी ॥७॥
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर, कौन भजन अधिकारी।
सरन गए आगे ह्वै लीन्हों, भेंट्यो भुजा पसारी ॥८॥
असुभ होइ जिहि के सुमिरे ते, बानर रीछ बिकारी।
बेद बिदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी ॥९॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित, जिनकी तुम बिपति निवारी।
कलिमल-ग्रसित दास तुलसी पर, काहे कृपा बिसारी ॥१०॥

दोहावली

राम बाम दिसि जानकी, लषन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानकर, तुलसी सुरतरु तोर ॥१॥

पय अहाइ फल खाइ जपु, राम नाम षट मास ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥२॥

रामनाम - मनि - दीप धरु, जीह - देहरी - द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियार ॥३॥

नाम राम को अंक है, सब साधन है सूनु ।
अंक गये कछु हाथ नहि, अंक रहे दस गून ॥४॥

रामनाम अवलम्ब बिनु, परमारथ की आस ।
बरषत बारिद बूँद गहि, चाहत चढ़न अकास ॥५॥

प्रीति प्रतीति सुरीति सो, राम राम जपु राम ।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥६॥

राम भरोसो, राम बल, रामनाम विश्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, माँगत तुलसीदास ॥७॥

हिय फाटहु, फूटहु नयन, जरउ सो तन केहि काम ।
द्रवहि, स्रवहि, पुलकहि नहीं, तुलसी सुमिरत राम ॥८॥

रहै न जल भरि पूरि, राम ! सुजस सुनि रावरो ।
तिन आँखिन में धूरि, भरि भरि मूठी मेलिये ॥९॥

रे मन ! सब सों निरस ह्वै, सरस राम सों होहि ।
भलो सिखावन देत है, निसि दिन तुलसी तोहि ॥१०॥

हरे चरहि, तापहि बरे, फरे पसारहि हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥११॥

जथा लाभ सन्तोष सुख, रघुबर - चरन-सनेह।
तुलसी जौ मन खूँद सम, कानन बसहु कि गेह ॥१२॥

तुलसी जो पै राम सों, नाहिन सहज सनेह।
मूँड़ मुड़ायो बादि ही, भाँड़ भयो तजि गेह ॥१३॥

बरषा को गोबर भयो, को चह, को कर प्रीति ?
तुलसी तू अनुभवहि अब, राम बिमुख की रीति ॥१४॥

तुलसी जौ लौ विषय की, मुधा माधुरी मीठि।
तौ लौ सुधा सहस्र सम, राम भगति सुठि सीठि ॥१५॥

तुलसी सुखी जो राम सों, दुखी सो निज करतूति।
करम बचन मन ठीक जेहि, तेहि न सकै कलि भूति ॥१६॥

तुलसी रामहु तें अधिक, राम भक्त जिय जान।
ऋनिया राजा राम भे, धनिक भये हनुमान ॥१७॥

बारि मथे घृत होइ बरु, सिकता तें बरु तेल।
बिनु हरि-भजन न भव तरिय, यह सिद्धान्त अपेल ॥१८॥

श्री रघुबीर प्रताप तें, सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमन्द जे राम तजि, भजहि जाय प्रभु आन ॥१९॥

सूधे मन, सूधे बचन, सूधी सब करतूति।
तुलसी सूधी सकल बिधि, रघुबर-प्रेम-प्रसूति ॥२०॥

बेष बिसद बोलनि मधुर, मन कटु करम मलीन।
तुलसी राम न पाइये, भये बिषय-जल-मीन ॥२१॥

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस अस राम कर, समुझि परै कहु काहि ॥२२॥

भव-भुवग तुलसी-नकुल, डसत ज्ञान हरि लेत ।
चित्रकूट इक औषधी, चितवत होत सचेत ॥२३॥

तुलसी जान्यों दसरथहि, धरमु न सत्य समान ।
रामु तजे जेहि लागि बिनु, राम परिहरे प्रान ॥२४॥

हम, हमार, आचार बड, भूरि भार धरि सीस ।
हठि सठ परबस परत जिमि, कीर-कोस-कृमि, कीस ॥२५॥

कहिबे कहँ रसना रची, सुनिबे कहँ किय कान ।
धरिबे कहँ चित हित सहित, परमारथहि सुजान ॥२६॥

घर कीन्हें घर जात है, घर छाँड़े घर जाइ ।
तुलसी घर बन बीच ही, राम प्रेमपुर छाइ ॥२७॥

तुलसी अद्भुत देवता, आसा देवी नाम ।
सेये सोक समर्पई, बिमुख भये अभिराम ॥२८॥

सोई सेंबर तेइ सुवा, सेवत सदा बसन्त ।
तुलसी महिमा मोह की, सुनत सराहहि सन्त ॥२९॥

ज्ञानी, तापस, सूर, कवि, कोविद, गुन आगार ।
केहि कै लोभ बिडम्बना, कीन्हि न यहि संसार ॥३०॥

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह के धारि ।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, माया रूपी नारि ॥३१॥

दीपसिखा सम जुवति-तन, मन जनि करसि पतग ।
भजहि राम, तजि काम मद, करहि सदा सतसग ॥३२॥

रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखि गे अङ्ग ।
तुलसी चातक प्रेम को, नित नूतन रुचि रङ्ग ॥३३॥

उपल बरषि गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर ।
चितव कि चातक मेघ तजि, कबहुँ दूसरी ओर ॥३४॥

बध्यो बधिक, पर्यो पुण्यजल, उलटि उठाई चोंच ।
तुलसी चातक प्रेम पट, मरतहुँ लगी न खोंच ॥३५॥

कै लघु कै बड़ मीत भल, सम सनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस, मिले महाविष होइ ॥३६॥

हृदय कपट, बर बेष धरि, बचन कहैं गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर ज्यों, क्यों मिलिये मन खोलि ॥३७॥

नीच निचाई नहिं तजै, सज्जनहूँ के संग ।
तुलसी चंदन बिटप बसि, बिनु बिष भये न भुजंग ॥३८॥

संत संग अपवर्ग-कर, कामी भवकर पंथ ।
कहहि साधु, कवि, कोविद, स्रुति, पुरान सदग्रन्थ ॥३९॥

अवसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिये का लाख ।
दुइज न चंदा देखिये, उदौ कहा भरि पाख ॥४०॥

उत्तम, मध्यम, नीच गति, पाहन, सिकता, पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुँन की, बैर बितिक्रम जानि ॥४१॥

आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥४२॥

रामकृपा तुलसी सुलभ, गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै, कीजै आपु समान ॥४३॥

होइ भले के अनभलो, होइ दानि के सूम।
होइ कुपूत सुपूत के, ज्यों पावक में धूम ॥४४॥

जड़-चेतन गुण-दोष-मय, बिस्व कीन्ह करतार।
संत-हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि बिकार ॥४५॥

प्रभु सनमुख भये नीच नर, होत निपट बिकराल।
रबि-रुख लखि दरपन फटिक, उगिलत ज्वाला जाल ॥४६॥

प्रभु समीप-गत सुजन-जन, होत सुखद सुबिचारि।
लवन-जलधि जीवन जलद, बरषत सुधा सुबारि ॥४७॥

ठाढो द्वार न दै सकै, तुलसी जे नर नीच।
निंदहिं बलि हरिचन्द को, का किया करन दधीच ॥४८॥

राकापति षोड़स उवहिं, तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन दव लाइये, बिनु रबि राति न जाइ ॥४९॥

पर-सुख-संपति देखि सुनि, जरहिं जे जड़ बिनु आगि।
तुलसी तिनके भाग ते, चले भलाई भागि ॥५०॥

तुलसी जे कीरति चहहिं, पर कीरति को खोइ।
तिनके मुँह मसि लागिहै, मिटिहि न, मरिहै धोइ ॥५१॥

सरल बक्रगति पंचग्रह, चपरि न चितवत काहु।
तुलसी सूधे सूर ससि, समय बिडंबित राहु ॥५२॥

तुलसी खल-बानी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि।
रामराज बाधक भई, मूढ मंथरा चेरि ॥५३॥

नीच गुड़ी ज्यों जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास।
ढीलि दिये गिरि परत महि, खैंचत चढत अकास ॥५४॥

पेरत कोल्हू मेलि तिल, तिली सनेही जानि।
देखी प्रीति की रीति यह, अब देखिबी रिसानि ॥५५॥

परद्रोही, परदार रत, परधन, पर-अपवाद।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥५६॥

कपट सार सूची सहस, बाँधि बचन पर बास।
कियो दुराउ चह चातुरी, सो सठ तुलसीदास ॥५७॥

देस - काल - करता - करम - बचन - बिचार - बिहीन।
ते सुर तरु-तर दारिदी, सुरसरि-तीर मलीन ॥५८॥

राज करत बिनु काजही, ठटहिं जे कूर कुठाट।
तुलसी ते कुरुराज ज्यों, जइहै बारह बाट ॥५९॥

सहज सुहृद, गुरु, स्वामि सिख जो न करै हित मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित-हानि ॥६०॥

कलह न जानब छोट करि, कलह कठिन परिनाम।
लगति अगिनि लघु नीच गृह, जरत धनिक धन धाम ॥६१॥

बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु।
जीति सहस सम हारिबो, जीते हारि निहारु ॥६२॥

जो परि पायँ मनाइये, तासों रूठि बिचारि।
तुलसी तहाँ न जीतिये, जहँ जीतेहू हारि ॥६३॥

जूझे ते भल बूझिबो, भली जीति तें हारि।
डहके ते डहकाइबो, भलो जो करिय बिचारि ॥६४॥

जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाप परितापु।
तासों रारि निवारिये, समय सँभारिय आपु ॥६५॥

रोष न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवारि।
सुनत मधुर परिनामहित, बोलिय बचन बिचारि ॥६६॥

मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु श्रम भाग अभाग।
कुहू कुहू कलकंठ रव, काँ काँ कररत काग ॥६७॥

पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागै ढेर।
सुमति बिचारे बोलिये, समुझि कुफेर सुफेर ॥६८॥

सूर समर करनी करहि, कहि न जनावहि आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर करहि प्रलापु ॥६९॥

रामलषन बिजयी भये, बनहु गरीब निवाज।
मुखर बालि रावन भये, घरही सहित समाज ॥७०॥

तुलसी असमय के सखा, धीरज, धरम बिबेक।
साहित, साहस, सत्यव्रत, राम भरोसो एक ॥७१॥

तुलसी जस भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहि पै (कि), ताहि तहाँ लै जाय ॥७२॥

बरषत करषत आपु जल, हरषत अरघनि भानु।
तुलसी चाहत साधु सुर, सब सनेह मनमानु ॥७३॥

नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चक चाषु।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहि मन अभिलाषु ॥७४॥

भरत सत्रुसूदन लषन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलिहि सुमंगल साथ ॥७५॥

सहि कुबोल, साँसति सकल, अँगइ अनट अपमान।
तुलसी धरम न परिहरिय, कहि, करि गये सुजान ॥७६॥

दो 'हा' चारु बिचारु चलु, परिहरि बाद-बिबाद ।
सुकृत-सीव स्वारथ-अवधि, परमारथ-मरजाद ॥७७॥

तुलसी सो समरथ, सुमति, सुकृती, साधु, सयान ।
जो बिचारि व्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान ॥७८॥

बिनु आँखिन की पानही पहिचानत लखि पाय ।
चारि नयन के नारि नर, सूझत मीचु न माय ॥७९॥

जो सुनि समुझि अनीति रत, जागत रहै जु सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥८०॥

बहु सुत, बहु रुचि, बहु बचन, बहु अचार व्यवहार ।
इनको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥८१॥

ब्यालहु तें बिकराल बड़, व्याल फेन जिय जानु ।
वहि के खाये मरत है, वहि खाये बिनु-प्रानु ॥८२॥

कारन तें कारज कठिन, होइ दोष नहि मोर ।
कुलिस अस्थि तें, उपल तें लोह कराल कठोर ॥८३॥

भलेहु चलत पथ पोच भय, नृप नियोग-नय-नेम ।
सुनिय सुभूपति भूषियत, लोह सँवारत हेम ॥८४॥

चढे बबूर चग ज्यों, ज्ञान ज्यों सोक-समाज ।
करम, धरम, सुख, सपदा, त्यों जानिबे कुराज ॥८५॥

कर के कर, मन के मनहि, बचन वचन गुन जानि ।
भूपहि भूलि न परिहरै, बिजय बिभूति सयानि ॥८६॥

मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान को एक ।
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित विवेक ॥८७॥

सेवक कर पद नयन से, मुख सो साहिब होइ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकबि सराहहि सोइ ॥८८॥

मन्त्री, गुरु अरु बैद जो, प्रिय बोलहि भय आस।
राज, धरम, तनु तीनि कर, होइ बेगिही नास ॥८९॥

लकड़ी, डौआ, करछुली, सरस काज अनुहारि।
सुप्रभु सग्रहहि परिहरहिं, सेवक-सखा बिचारि ॥९०॥

साहब तें सेवक बडो, जो निज धरम सुजान।
राम बाँधि उतरे उदधि, लाँघि गये हनुमान ॥९१॥

गोखग, खखग, बारिखग, तीनो माहि बिसेक।
तुलसी पीवै फिरि चलै, रहै फिरै सँग एक ॥९२॥

मातु-पिता-गुरु-स्वामि सिख, सिर धरि करहि सुभाय।
लहेउ लाभ तिन जनम कर, नतरु जनम जग जाय ॥९३॥

रामायण-अनुहरत सिख, जग भयो भारत रीति।
तुलसी सठ की को सुनै ? कलि कुचालि पर प्रीति ॥९४॥

चोर, चतुर, बटमार, नट, प्रभुप्रिय, भँडुआ, भड।
सब भच्छक, परमारथी, कलि सुपथ पाषड ॥९५॥

फोरहिं सिल-लोढा सदन, लागे अढुक पहार।
कायर कूर कपूत कलि, घर घर सहस डहार ॥९६॥

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरत सीताराम।
सगुन समगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥९७॥

पुरुषारथ स्वारथ सफल, परमारथ, परिनाम।
सुलभ सिद्धि सब साहिबी, सुमिरत सीताराम ॥९८॥

का भाषा का ससकृत, प्रेम चाहिये साँच।
काम जु आवै कामरी, का लै करिय कुमाच ॥९९॥

मनि मानिक महँगे किये, सहँगे तृन जल नाज।
तुलसी एते जानिये, राम गरीब निवाज ॥१००॥

कवितावली रामायण

अवधेस के द्वारे सकारे गई, सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच-बिमोचन को ठगि-सी रही, जे न ठगे धिक से॥
'तुलसी' मनरंजन रंजित अंजन नैन सु-खंजन-जातक से।
सजनी ससि में समसील उभै नवनील सरोरुह से बिकसे॥१॥

तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन, कंज की मंजुलताई हरैं।
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे, छबि भूरि अनंग की दूरि धरैं॥
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यों, किलकैं कल बाल-बिनोद करैं।
अवधेस के बालक चारि सदा, 'तुलसी' मन-मन्दिर में बिहरैं॥२॥

पग नूपुर औ पहुँची कर कंजनि, मंजु बनी मनिमाल हिये।
नवनील कलेवर पीत झँगा झलकैं, पुलकैं नृप गोद लिये।
अरविंद सो आनन, रूप मरंद अनंदित लोचन-भृंग पिये।
मन मों न बस्यो अस बालक जौं 'तुलसी' जग में फल कौन जिये॥३॥

कबहूँ ससि माँगत आरि करैं, कबहूँ प्रतिबिंब निहारि डरैं।
कबहूँ करताल बजाइ कै नाचत, मातु सबै मन मोद भरैं।
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठि कै, पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं।
अवधेस के बालक चारि सदा, 'तुलसी' मन मन्दिर में बिहरैं॥४॥

दूलह श्री रघुनाथ बने, दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं।
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि, बेद जुवा जुरि बिप्र पढ़ाहीं॥

राम को रूप निहारति जानकि, कंकन के नग की परछाहीं।
यातें सबै सुधि भूल गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं ॥५॥

दूब दधि रोचना कनक थार भरि भरि,
आरती सँवारि वर नारि चलीं गावती।
लीन्हे जयमाल करकंज सोहै जानकी के,
"पहिराओ राघोजू को" सखियाँ सिखावती ॥
तुलसी मुदित मन जनक नगर जन,
झाँकती झरोखे लागी सोभा रानी पावती।
मनहुँ चकोरी चारु बैठी निज निज नीड़,
चंद की किरन पीवैं पलकैं न लावती ॥६॥

गर्भ के अर्भक काटन को, पटु धार कुठार कराल है जाको।
सोई हौ बूझत राज-सभा "धनु, को दल्यौ?" हौ दलिहौं बल ताको ॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो, लरिहै मरिहै, करिहै कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो, कहौ कौसिक छोटो-सो ढोटो है काको ॥७॥

बिंध्य के बासी उदासी तपोब्रत, धारी महा बिनु नारि दुखारे।
गौतम तीय तरी 'तुलसी', सो कथा सुनि भे मुनिवृन्द सुखारे ॥
ह्वै है सिला सब चन्द्रमुखी, परसे पद-मंजुल-कंज तिहारे।
कीन्ही भली रघुनायक जू, करुना करि कानन को पगु धारे ॥८॥

कीर के कागर ज्यों नृप चीर, विभूषन उप्पम अंगनि पाई।
औध तजी मगबास के रूख ज्यौं, पंथ के साथी ज्यौं लोग-लुगाई ॥
संग सुबंधु, पुनीत प्रिया, मनो धर्म क्रिया धरि देह सुहाई।
राजिवलोचन राम चले, तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं ॥९॥

नाम अजामिल से खल कोटि अपार नदी भव बूड़त काढ़े ।
जो सुमिरे गिरि-मेरु सिला-कन होत अजाखुर बारिधि बाढ़े ॥
'तुलसी' जेहि के पद-पंकज तें प्रगटी तटिनी जो हरै अघ गाढ़े ।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े ॥१०॥

एहि घाट तें थोरिक दूर अहै कटि लौं जल-थाह दिखाइहौं जू ।
परसे पगधूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू ॥
तुलसी अवलंब न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू ।
बरु मारिय मोहिं, बिना पग धोये हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू ॥११॥

रावरे दोष न पायँन को, पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है ।
पाहन तें बन-बाहन काठ को कोमल है, जल खाइ रहा है ॥
पावन पायँ पखारि कै नाव चढ़ाइहौं, आयसु होत कहा है ।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है ॥१२॥

पातभरी सहरी, सकल सुत बारे-बारे,
केवट की जाति कछू बेद न पढ़ाइहौं ।
सब परिवार मेरो याही लागि राजा जू !
हौं दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं ॥
गौतम की घरनी ज्यों तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सों निषाद ह्वै कै बाद न बढ़ाइहौं ।
'तुलसी' के ईस राम रावरे सौं साँची कहौं,
बिना पग धोये नाथ नाव न चढ़ाइहौं ॥१३॥

पुर तें निकसी रघुबीर बधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै ।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गये मधुराधर वै ॥

फिरि बूझति है 'चलनो अब केतिक, पर्णकुटी करिहौ कितह्वै' ?
तिय की लखि आतुरता पिय की, अँखियाँ अति चारु चली जलच्वै ॥१४।

जल को गये लक्खन है लरिका, परिखौ, पिय ! छाँह घरीकिह्वै ठाढे ।
पोंछि पसेउ बयारि करौ, अरु पाँयँ पखारिहौ भूभुरि डाढे ॥
'तुलसी' रघुबीर प्रिया स्रम जानि कै बैठि बिलब लौ कटक काढे ।
जानकीनाह को नेह लख्यौ पुलको तनु बारि बिलोचन बाढे ॥१५॥

रानी मै जानी अजानी महा, पवि पाहन हूँ तें कठोर हियो है ।
राजहु काज अकाज न जान्यो, कह्यो तिय को जिन कान कियो है ॥
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है ।
आँखिन में, सखि ! राखिबे जोग, इन्हे किमि कै बनबास दियो है ॥१६॥

सीस जटा, उर बाहु बिसाल, बिलोचन लाल, तिरीछी सी भौहै ।
तून सरासन बान धरे, 'तुलसी' बन-मारग में सुठि सौहै ॥
सादर बारहिबार सुभाय चितै तुम त्यों हमरो मन मोहै ।
पूछति ग्राम बधू सिय सों "कहौ सांवरे से, सखि रावरे को है" ॥१७॥

सुनि सुदर बैन सुधारस-साने, सयानी है जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन, दै सैन तिन्है समझाइ कछू मुसुकाइ चली ॥
'तुलसी' तेहि औसर सोहै सबै अवलोकति लोचन लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग में भानु उदै बिगसी मनो मजुल कज-कली ॥१८॥

बासव बरुन बिधि बन तें सुहावनो,
दसानन को कानन बसन्त को सिगारु सो ।

समय पुराने पात परत, डरत बात,
पालत, लालत रति मार को बिहारु सो ॥
देखि बर बापिका तडाग बाग को बनाव,
रागबस भो बिरागो पवन कुमारु सो ।
सीय की दसा बिलोकि बिटप असोक तर,
'तुलसी' बिलोक्यो सो तिलोक-सोक-सारु सो ॥१९॥

बसन बटोरि बोरि-बोरि तेल तमीचर,
खोरि-खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर है ।
तैसो कपि कौतुकी डरात ढीलो गात कै-कै,
लात के अघात सहै जी में कहै 'कूर है' ॥
बाल किलकारी कै-कै तारी दै-दै गारी देत,
पाछे लागे बाजत निशान ढोल तूर है ।
बालधी बढन लागी, ठौर-ठौर दीन्ही आगि,
बिंध की दवागि, कैधो कोटिसत सूर है ॥२०॥

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
जरत निकेत धाओ धाओ लागि आगि रे ।
कहाँ तात, मात, भ्रात, भगिनी, भामिनी, भाभी,
छोटे-छोटे छोहरा, अभागे भोरे भागि रे ॥
हाथी छोरो, घोरा छोरो, महिष वृषभ छोरो,
छेरी छोरो, सोवै सो जगाओ जागि जागि रे ।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
"बार बार कह्यो पिय कपि सों न लागि रे" ॥२१॥

हाट, बाट, कोट ओट, अट्टनि, अगार पौरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है।
आरत पुकारत; सँभारत न कोऊ काहू,
व्याकुल जहा सो तहाँ लोग चले भागि है॥
बालधी फिरावै बारबार झहरावै झरैं,
बूँदिया सी लंक पघिलाइ पागि पागि है।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहै,
"चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहैं" ॥२२॥

पान पकवान बिधि नाना को, सँधानो सीधो,
बिबिध बिधान धान बरत बखारही।
कनक किरीट कोटि, पलँग, पेटारे, पीठ,
काढत कहार, सब जरे भरे भारही॥
प्रबल अनल बाढ़ै, जहाँ काढ़ै तहाँ डाढ़ै,
झपट लपट भरे भवन भँडारही।
'तुलसी' अगार न पगार न बजार बच्यो,
हाथी हथिसार जरे, घोरे घोरसार ही॥२३॥

कॉपि दसकन्ध तब प्रलय-पयोद बोले,
रावन रजाइ धाइ आये जूथ जोरि के।
कह्यो लंकपति "लंक बरत बुताओ बेगि,
बानर बहाइ मारो महाबारि बोरि कै॥"
"भले नाथ !" नाइ माथ चले पाथ-प्रद नाथ,
बरसैं मुसलधार बार बार घोरि कै।
जीवन तें जागी आगी, चपरि चौगुनी लागी,
'तुलसी' भभरि मेघ भागे मुख मोरि कै॥२४॥

रावन सो राजरोग बाढ़त बिराट उर,
दिन दिन बिकल सकल सुख-राँक सो।
नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि,
होत न बिसोक, औत पावै न मनाक सो॥
राम की रजाय तें रसायनी समीर-सूनु,
उतरि पयोधि पार सोधि सरवाक सो।
जातुधान बुट, पुटपाक लंक जातरूप,
रतन जतन जारि कियो है मृगांक सो।२५॥

तोसों कहौं दसकंधर रे, रघुनाथ-बिरोध न कीजिय बौरे।
बालि बली खर-दूषन और अनेक गिरे जे जे भीति में दौरे॥
ऐसिय हाल भई तोहिं धौं, नतु लै मिलु सीय चहै सुख जौ रे।
राम के रोष न राखि सकै 'तुलसी' बिधि, श्रीपति, संकर सौ रे॥२६॥

हाथिन सों हाथी मारे, घोरे घोरे सों सँहारे,
रथनि सों रथ बिदरनि, बलवान की।
चंचल चपेट चोट चरन चकोट चाहैं,
हहरानी फौजैं भहरानी जातुधान की॥
बार बार सेवक-सराहना करत राम,
'तुलसी' सराहै रीति साहेब सुजान की।
लाँबी लूम लसत लपेटि पटकत भट;
देखौ देखौ, लखन! लरनि हनुमान की।२७॥

दबकि दबोरे एक, बारिधि में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं।

पकरि पछारे कर, चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे, एक मीजि मारे लात है ॥
'तुलसी' लखत राम, रावन बिबुध, बिधि,
चक्र पानि, चंडीपति, चंडिका सिहात है।
बड़े बड़े बानइत बीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथन निपाते बात जात है ॥२८॥

प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड बीर,
धाये जातुधान हनुमान लियो घेरि कै।
महाबल-पुंज कुंजरारि ज्यों गरजि भट,
जहाँ तहाँ पटके लँगूर फेरि फेरि कै ॥
मारे लात, तोरे गात, भागे जात, हाहा खात,
कहै 'तुलसीस राखि राम की सौं' टेरि कै।
ठहर ठहर परे कहरि कहरि उठै,
हहरि हहरि हर सिद्ध हँसे हेरि कै ॥२९॥

कतहुँ बिटप भूधर उपारि परसेन बरक्खत।
कतहुँ बाजि सों बाजि मर्दि गजराज करक्खत ॥
चरन चोट चटकन चकोट अरि उर सिर बज्जत।
बिकट-कटक बिद्दरत बीर बारिद जिमि गज्जत ॥
लंगूर लपेटत पटकि भट, 'जयति राम जय' उच्चरत।
तुलसीस पवन-नन्दन अटल जुद्ध क्रुद्ध कौतुक करत ॥३०॥

रीति महाराज की नेवाजिये जो माँगनो सो,
दोष-दुख-दारिद-दरिद्र कै कै छोड़िये।

नाम जाको कामतरु देत फल चारि, ताहि,
'तुलसी' बिहाइ कै बबूर रेंड गोड़िये ॥
जाचै को नरेस देस देस को कलेस करै ?
देहैं तो प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बौड़िये ।
कृपापाथनाथ लोकनाथनाथ सीतानाथ,
तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िये ? ॥३१॥

सुत, दार, अगार, सखा परिवार बिलोकु महा कुसमाजहि रे ।
सब की ममता तजि कै, समता सजि संत सभा न बिराजहि रे ?
नर देह कहा करि देखु बिचार, बिगारु गँवार न काजहि रे ।
जनि डोलनि लोलुप कूकर ज्यों, "तुलसी" भजु कोसलराजहि रे ॥३२॥

बिषया परनारि, निसा तरुनाई, सु पाइ परयो अनुरागहि रे ।
जम के पहरू दुख रोग बियोग, बिलोकत हू न बिरागहि रे ॥
ममता बस तै सब भूलि गयो, भयो भोर, महाभय भागहि रे ।
जरठाइ दिसा, रबिकाल उग्यो, अजहूँ जड़ जीव न जागहि रे ॥३३॥

राम है मातु पिता गुरु बंधु औ संगी सखा सुत स्वामि सनेही ।
राम की सौंह, भरोसो है राम को, राम रंग्यो रुचि राच्यो न केही ॥
जीयत राम, मुये पुनि राम, सदा रघुनाथहि की गति जेही ।
सोइ जियै जग में 'तुलसी', न तु डोलत और मुये धरि देही ॥३४॥

'झूठो है झूठो है झूठो सदा जग' संत कहंत जे अंत लहा है ।
ताको सहै सठ संकट कोटिक, काढ़त दंत करंत हहा है ॥
जानपनी को गुमान बड़ो, 'तुलसी' के बिचार गँवार महा है ।
जानकी जीवन जान न जान्यो तौ जान कहावत जान्यो कहा है ॥३५॥

तिन्ह तें खर सूकर स्वान भले, जड़ताबस ते न कहै कछुवै।
'तुलसी' जेहि राम सों नेह नहीं सो सही पसु पूँछ बिखान न द्वै॥
जननी कत भार मुई दस मास भई किन बांझ, गई किन च्वै।
जरि जाउ सो जीवन, जानकि नाथ ! जियैजग में तुम्हरो बिन ह्वै॥३६॥

काम से रूप, प्रताप दिनेस से, सोम से सील, गनेस से माने।
हरिचंद से साँचे, बड़े बिधि से, मघवा से महीप बिषै-सुख साने॥
सुक से मुनि, सारद से बकता, चिर जीवन लोमस तें अधिकाने।
ऐसे भये तौ कहा 'तुलसी' जुपै राजिव-लोचन राम न जाने॥३७॥

झूमत द्वार अनेक मतंग जँजीर जरे मदअँबु चुचाते।
तीखे तुरंग मनोगति चंचल, पौन के गौनहु तें बढ़ि जाते॥
भीतर चंद्रमुखी अवलोकति, बाहर भूप खरे न समाते।
ऐसे भये तौ कहा 'तुलसी' जुपै जानकी नाथ के रंग न राते॥३८॥

राग को न साज, न बिराग जोग जाग जिय।
काया नहिं छोड़ि देत ठाटिबो कुठाट को॥
मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि।
चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाक को॥
भयो करतार बड़े कूर को कृपालु, पायो।
नाम-प्रेम-पारस हौं लालची बराट को॥
'तुलसी' बनी है राम रावरे बनाये, ना तौ।
धोबी कैसो कूकर न घर को न घाट को॥३९॥

सब अंग-हीन, सब-साधन-बिहीन मन।
बचन मलीन, हीन कुल करतूति हौं॥

बुधि-बल-हीन, भाव-भगति-बिहीन, हीन
गुन, ज्ञानहीन, हीन भागहू बिभूति हौं ॥
'तुलसी' गरीब की गई-बहोर रामनाम ।
जाहि जपि जीह रामहू को बैठो धूति हौं ॥
प्रीति रामनाम सों, प्रतीति रामनाम की,
प्रसाद रामनाम के पसारि पाँय सूतिहौं ॥४०॥

जायो कुल मंगन, बधायो न बजायो सुनि ।
भयो परिताप पाप जननी जनक को ॥
बारे तें ललात बिललात द्वार द्वार दीन ।
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक को ॥
'तुलसी' सो साहब समर्थ को सुसेवक है ।
सुनत सिहात सोच बिधि हू गनक को ॥
नाम, राम ! रावरो सयानो किधौं बावरो,
जो करत गिरी ते गरु तृन तें तनक को ॥४१॥

न मिटै भव संकट दुर्घट है, तप तीरथ जन्म अनेक अटो ।
कलि में न बिराग न ज्ञान कहूँ, सब लागत फोकट झूठ जटो ॥
नट ज्यों जनि पेट-कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो ।
'तुलसी' जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसिबासर राम रटो ॥४२॥

राम बिहाय 'मरा' जपते बिगरी सुधरी कबि-कोकिल हू की ।
नामहि तें गज की, गनिका की, अजामिल की चलि गै चल-चूकी ॥
नाम-प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पांडु-बधू की ।
ताको भलो अजहूँ 'तुलसी' जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की ॥४३॥

भागीरथी जलपान करौं अरु नाम द्वै राम के लेत नितैहौं ।
मोको न लेनो न देनो कछू कलि ! भूलि न रावरी ओर चितैहौं ॥
जानि कै जोर करौ परिनाम, तुम्हैं पछितैहौ पै मैं न भितैहौं ।
ब्राह्मन ज्यों उगिल्यो उरगारि, हौं त्योंही तिहारे हिये न हितैहौं ॥४४॥

धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ ।
काहू की बेटी सों बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगारौं न सोऊ ॥
'तुलसी' सरनाम गुलाम है राम को, जाको रुचै सो कहै कछु कोऊ ।
माँगिकै खैबो मसीत को सोइबो, लैबो को एक न दैबे को दोऊ ॥४५॥

बेष बिराग को, राग भरो मनु, माय ! कहौं सतिभाव हौं तोसों ।
तेरे ही नाथ को नाम लै बेंचिहौं पातकी पामर प्राननि पोसों ॥
एते बड़े अपराधी अघी कहुँ, तै कहु अंब ! को मेरो तू मोसों ।
स्वारथ को परमारथ को, परिपूरन भो फिरि घाटि न होसों ॥४६॥

जहाँ बालमीकि भये ब्याध तें मुनींद्र साधु,
'मरा मरा' जपे सुनि सिय ऋषि सात की ।
सीय को निवास लव-कुस को जनम थल,
'तुलसी' छुवत छाँह ताप गरै गात की ॥
बिटप-महीप सुर सरित समीप सोहै,
सीताबट पेखत पुनीत होत पातकी ।
बारिपुर दिगपुर बीच बिलसति भूमि,
अंकित जो जानकी-चरन-जलजात की ॥४७॥

देव कहैं अपनी अपना अवलोकन तीरथ-राज चलो रे ।
देखि मिटैं अपराध अगाध, निमज्जत साधु समाज भलो रे ॥
सोहै सितासित को मिलिबो 'तुलसी' हुलसै हिय हेरि हलोरे ।
मानो हरे तृन चारु चरैं बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे ॥४८॥

देवनदी कहँ जो जन जान किये मनसा, कुल कोटि उधारे।
देखि चले, झगरै सुरनारि, सुरेस बनाइ बिमान सँवारे॥
पूजा को साज बिरंचि रचै, 'तुलसी' जे महातम जाननहारे।
ओक की नीव परी हरिलोक बिलोकत गंग तरंग तिहारे॥४९॥

बारि तिहारो निहारि, मुरारि भये परसे पद पाप लहौंगो।
ईस ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समता बड़ दोष दहौंगो॥
बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौंगो।
भागीरथी! बिनवौं कर जोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो॥५०॥

जहाँ बन पावनो, सुहावनो बिहङ्ग मृग,
देखि अति लागत आनन्द खेत खूट सो।
सीता रामलषन निवास, बास मुनिन को,
सिद्ध साधु साधक सबै बिबेक बूट सो॥
झरना झरत झारि सीतल पुनीत बारि,
मंदाकिनी मंजुल महेस जटाजूट सो।
'तुलसी' जौ राम सों सनेह साचो चाहिये,
तौ सेइये सनेह सों बिचित्र चित्रकूट सो॥५१॥

लालची ललात, बिललात द्वार द्वार दीन,
बदन मलीन, मन मिटै न बिसूरना।
ताकत सराध, कै बिवाह, कै उछाह कछू,
डोलै लोल बूझत सबद ढोल तूरना॥
प्यासे हू न पावै बारि, भूखे न चनक चारि,
चाहत अहारन पहार, दारि कूरना।
सोक को अगार दुख-भार-भरो तौलौं जन;
जौलौं देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना॥५२॥

पिंगल जटा कलाप, माथे पै पुनीत आप,
पावक नैना, प्रताप भ्रू पर बरत हैं।
लोचन बिसाल लाल, सोहै बालचन्द्र भाल,
कठ-काल कूट, ब्याल भूषन धरत है॥
सुन्दर दिगबर बिभूति गात, भाँग खात,
रूरे सृंगी पूरे काल-कटक हरत है।
देत न अघात, रीझि जात पात आक ही के,
भोलानाथ जोगी जब औढर ढरत है॥५३॥

लोकबेद हू बिदित बारानसी की बड़ाई,
बासी नरनारि ईस-अंबिका-सरूप है।
कालनाथ कोतवाल, दड-कारि दड पानि,
सभासद गनप से अमित अनूप है॥
तहाँऊ कुचालि कलिकाल की कुरीति, कैधौं,
जानत न मूढ, इहाँ भूतनाथ भूप है।
फलैं फूलै फैलै खल, सीदैं साधु पल पल,
खाती दीपमालिका, ठठाइयत सूप हैं॥५४॥

सकर-सहर सर, नर नारि बारिचर,
बिकल सकल महामारी माँजा भई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भभरि भगत, जल-थल मीचुमई है॥
देव न दयालु, महिपाल न कृपालु चित,
बारानसी बाढ़ति अनीति नित नई है।
पाहि रघुराज, पाहि कपिराज रामदूत
रामहू की बिगरी तुही सुधारि लई है॥५५॥

एक तो कराल कलिकाल सूल-मूल तामें,
कोढ में की खाजु सो सनीचरी है मीन की।
वेद-धर्म दूरि गये, भूमि-चोर भूप भये,
साधु सीद्यमान, जानि रीति पाप-पीन की॥
दूबरे को दूसरो न द्वार, राम दयाधाम !
रावरी ही गति बल-विभव-बिहीन की।
लागैगी पै लाज वा बिराजमान बिरुदहिं,
महाराज आजु जौं न देत दादि दीन की॥४४॥

रामनाम मातु-पितु, स्वामि, समरथ हितु,
आस राम-नाम की, भरोसो रामनाम को।
प्रेम रामनाम ही सो, नेम रामनाम हीं को,
जानौं न मरम पद दाहिनों न बाम को।
स्वारथ सकल, परमारथ को रामनाम,
रामनाम-हीन 'तुलसी' न काहू काम को।
राम की सपथ, सरबस मेरे रामनाम,
कामधेनु कामतरु मो-से-छीन-छाम को॥४५॥

गीतावली

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई ।
रूप-सील-गुन-धाम राम नृप-भवन प्रगट भये आई ॥१॥
अति पुनीत मधुमास, लगन-ग्रह-बार-जोग समुदाई ।
हरषवत चर-अचर, भूमि सुर-तनरुह पुलक जनाई ॥२॥
बरषहिं बिबुध-निकर कुसुमावलि, नभ दु दुभी बजाई ।
कौसल्यादि मातु मन हरषित, यह सुख बरनि न जाई ॥३॥
सुनि दसरथ सुत जनम लिये सब गुरुजन बिप्र बोलाई ।
बेद-बिहित करि क्रिया परम सुचि, आनँद उर न समाई ॥४॥

या सिसु के गुन-नाम-बड़ाई ।
को कहि सकै, सुनहु नरपति, श्रीपति समान प्रभुताई ॥१॥
जद्यपि बुधि, बय, रूप, सील, गुन समय चारु चारयो भाई ।
तदपि लोक-लोचन-चकोर-ससि राम भगत सुखदाई ॥२॥
सुर, नर, मुनि करि अभय, दनुज हति, हरहि धरनि गरुआई ।
कीरति बिमल बिस्व-अघमोचनि, रहिहि सकल जग छाई ॥३॥
या के चरन-सरोज कपट तजि जे भजि है मन लाई ।
ते कुल जुगल सहित तरिहै भव, यह न कछू अधिकाई ॥४॥
सुनि गुरु-बचन, पुलक तन दंपति, हरष न हृदय समाई ।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख प्रभु मन में मुसुकाई ॥५॥

ललित सुतहि लालति सचु पाये ।
कौसल्या कल कनक अजिर महँ सिखवति चलन अँगुरिया लाये ॥१॥

कटि किंकिनी, पैजनी पाँयनि बाजति रुनझुन मधुर रेंगाये ।
पहुँची करनि, कंठ कठुला बन्यो केहरि नख मनि-जरित जराये ॥२॥
पीत पुनीत बिचित्र झँगुलिया सोहति स्याम सरीर सोहाये ।
दँतियाँ द्वै द्वै मनोहर मुख छबि, अरुन अधर चित लेत चोराये ॥३॥
चिबुक कपोल नासिका सुन्दर, भाल तिलक मसि बिंदु बनाये ।
राजत नयन मंजु अंजन जुत खंजन कंज मीन मद नाये ॥४॥
लटकन चारु भ्रकुटिया टेढ़ी, मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाये ।
किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि, डरपति जननि पानि छुटकाये ॥५॥
गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देखाये ।
बाल-केलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनँद न अमाये ॥६॥
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराये ।
तुलसिदास जे रसिक न यहि रस ते नर जड़ जीवत जग जाये ॥७॥

बिहरत अवध-बीथिन राम ।
संग अनुज अनेक सिसु, नव-नील-नीरद-स्याम ॥१॥
तरुन अरुन-सरोज-पद बनी कनकमय पदत्रान ।
पीत-पट कटि तून बर, कर ललित लघु धनु-बान ॥२॥
लोचननि को लहत फल छबि निरखि पुर-नर-नारि ।
बसत तुलसीदास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥

छोटि ऐ धनुहियाँ पनहियाँ पगन छोटी,
छोटि ऐ कछौटी कटि, छोटि ऐ तरकसी ।
लसत झँगूली झीनी, दामिनि की छबि छीनी,
सुंदर बदन, सिर पगिया जरकसी ॥१॥

बय-अनुहरत बिभूषन बिचित्र अंग,
जोहे जिय आवति सनेह की सरकसी।
मूरति की सूरति कही न परै तुलसी पै,
जानै सोई जाके उर कसकै करकसी ॥२॥

आजु सकल सुकृत फलु पाइहौ।
ख की सीव, अवधि आनँद की, अवध बिलोकिहौ पाइहौ ॥१॥
तनि सहित दसरथहि देखिहौ, प्रेम पुलकि उर लाइहौ।
मचन्द्र-मुखचद्र-सुधा छबि नयन-चकोरनि प्याइहौ ॥२॥
ादर समाचार नृप बुझिहै, हौ सब कथा सुनाइहौ।
लसी ह्वै कृतकृत्य आश्रमहिं रामलषन लै आइहौ ॥३॥

रामपद-पदुम-पराग परी।
ऋषि तिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबिमय देह धरी ॥१॥
बल पाप पति-साप दुसह दव दारुन जरनि जरी।
कृपा सुधा सिंचि बिबुध-बेलि-ज्यौ फिरि सुख-फरनि फरी ॥२॥
नेगम-अगम मूरति महेस-मति-जुबति बराय बरी।
सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ इकटक तें न टरी ॥३॥
बरनति हृदय सरूप, सील, गुन प्रेम-प्रमोद-भरी।
तुलसिदास अस केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ॥४॥

रहहु भवन हमरे कहे, कामिनि!
दर सासु चरन सेवहु नित, जो तुम्हरे अतिहित, गृहस्वामिनि ॥१॥
जकुमारि! कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौ मृदु पद गजगामिनि।
सह बात, बरषा, हिम, आतप कैसे सहिहौ अगनित दिन जामिनि ॥२॥

हौ पुनि पितु-आग्या प्रमान करि ऐहौ बेगि सुनहु दुति दामिनि ।
तुलसिदास-प्रभु-बिरह-बचन सुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥

चित्रकूट अति बिचित्र, सुंदरबन, महि पवित्र,
पावनि पय-सरित सकल मल-निकंदिनी ।
सानुज जहँ बसत राम, लोक-लोचनाभिराम,
बाम अंग बामावर बिस्व-बंदिनी ॥१॥
रिषिवर तहँ छंद बास, गावत कल कोकिल हास,
कीर्तन उनमाय काय क्रोध-कंदिनी ।
बर बिधान करत गान, वारत धन-मान-प्रान,
झरना झरत झिंग झिंग झिंग जल तरंगिनी ॥२॥
बर बिहारु चरन चारु पाँडर चंपक चनार,
करनहार बार पार पुर-पुरंगिनी ।
जोबन नव ढारत ढार दुत्त मत्त मृग मराल
मंजु मंजु गुंजत है अलि अलिंगिनी ॥३॥
चितवत मुनिगन चकोर, बैठे निज ठौर ठौर,
अच्छय अकलंक सरद-चंद-चंदिनी ।
उदित-सदा-बन-अकास, मुदित बदत तुलसिदास,
जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ॥४॥

सब दिन चित्रकूट नीको लागत ।
बरषा ऋतु प्रबेस बिसेष गिरि देखन मन अनुरागत ॥१॥
चहुँदिसि बन संपन्न, बिहँग-मृग बोलत सोभा पावत ।
जनु सुन रेस देस-पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत ॥२॥
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि ।
मनहु आदि अंभोज बिराजत सेवित सुर-मुनि-भृंगनि ॥३॥

सिखर परस-घन घटहि, मिलति बग-पाँति सो छबि कबि बरनी।
आदि बराह बिहरि बारिधिमनो उठ्यो है दसन धरि धरनी ॥४॥
जल-जुत बिमल सिलनि झलकत नभ-बन-प्रतिबिंब तरंग।
मानहु जग-रचना बिचित्र बिलसति बिराट अँग अंग ॥५॥
मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे।
तुलसी सकल सुकृत-सुख लागे मानौ राम-भगति के पाछे ॥६॥

जननी निरखति बान-धनुहियाँ।
बार बार उर-नैननि लावति प्रभु जू की ललित पनहियाँ ॥१॥
कबहुँ प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय बचन सबारे।
उठहु तात ! बलि मातु बदन पर, अनुज-सखा सब द्वारे ॥२॥
कबहुँ कहति यों, बड़ी बार भइ, जाहु भूप पहँ, भैया।
बंधु बोलि जेंइय जो भावै, गई निछावरि मैया ॥३॥
कबहुँ समुझि बन गवन राम को रहि चकि चित्र लिखी-सी।
तुलसिदास वह समय कहेतें लागति प्रीति सिखी-सी ॥४॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो।
तब तब बिकल होति कौसल्या दिन दिन प्रतिदुख दूनो ॥
सुमिरत बाल-बिनोद राम के सुंदर मुनि-मन-हारी।
होत हृदय अति सूल समुझि पद-पंकज अजिर-बिहारी ॥
को अब प्रात कलेऊ माँगत रूठि चलैगो, माई !
स्याम-तामरस-नैन स्रवत जल काहि लेउँ उर लाई ॥
जीवौं तौ बिपति सहौं निसि बासर मरौं तौ मन पछितायो।
चलत बिपिन भरि नयन राम को बदन न देखन पायो ॥
'तुलसिदास' यह दुसह दसा अति, दारुन बिरह घनेरो।
दूरि करै को भूरि कृपा बिनु सोक-जनित रुज मेरो !

ऐसे तैं क्यों कटु बचन कह्यो री ?
'राम जाहु कानन' कठोर तेरो कैसे धौं हृदय रह्यो री ॥१॥
दिनकर-बंस, पिता दसरथ-से, राम-लषन से भाई।
जननी ! तू जननी ? तौ कहा कहौं, बिधि केहि खोरि न लाई ॥२॥
हौं लहिहौं सुख राजमात ह्वै, सुत सिर छत्र धरैगो।
कुल-कलंक मल-मूल मनोरथ तव बिनु कौन करैगो ? ॥३॥
ऐहैं राम, सुखी सब ह्वैहैं, ईस अजस मेरो हरिहैं।
तुलसिदास मोको बड़ो सोच है, तू जनम कौन बिधि भरिहै ॥४॥

बिलोके दूर तें दोउ बीर।
उर आयत, आजानु सुभग भुज, स्यामल गौर सरीर ॥
सीस जटा, सरसीरुह लोचन, बने परिधन मुनि चीर।
निकट निषंग, संग सिय सोभित, करनि धुनत धनु तीर ॥
मन अगहुँड़ तनु पुलक सिथिल भयो, नलिन नयन भरे नीर।
गड़त गोड मानों सकुच-पंक महँ, कढ़त प्रेम-बलधीर ॥
'तुलसिदास' दसा देखि भरत की उठि धाये अतिहि अधीर।
लिये उठाइ उर लाइ कृपानिधि बिरह-जनित हरि पीर ॥

जब तें चित्रकूट तें आये।
नंदिग्राम खनि अवनि, डासि कुस, परनकुटी करि छाए ॥१॥
अजिन बसन, फल असन, जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हें।
प्रभु-पद-प्रेम-नेम-ब्रत निरखत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हें ॥२॥
सिंहासन पर पूजि पादुका बारहिबार जोहारे।
प्रभु-अनुराग माँगि आयसु पुरजन सब काज सँवारे ॥३॥
तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेज तनु, त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई।
भये, न है, न होहिंगे कबहूँ भुवन भरत-से भाई ॥४॥

आली ! हौं इन्हहिं बुझावौं कैसे ?
लेत हिये भरि भरि पति को हित, मातु हेतु सुत जैसे ॥१॥
बार बार हिहिनात हेरि उत, जो बोलै कोउ द्वारे ।
अग लगाइ लिये बारे तें करुनामय सुत प्यारे ॥२॥
लोचन सजल, सदा सोवत-से, खान पान बिसराये ।
चितवत चौंकि नाम सुनि, सोचत राम-सुरति उर आये ॥३॥
तुलसी प्रभु के बिरह-बधिक हठि राजहस-से जोरे ।
ऐसेहु दुखित देखि हौं जीवति राम-लखन के घोरे ॥४॥

राघौ एक बार फिरि आवौ ।
ये बर बाजि बिलोकि आपने बहुरो बनहिं सिधावौ ॥
जे पय प्याइ पोखि कर-पकज बार बार चुचुकारे ।
ज्यों जीवहिं मेरे राम लाड़िले ! ते अब निपट बिसारे ॥
भरत सौगुनी सार करत है अति प्रिय जानि तिहारे ।
तदपि दिनहिं दिन होत झाँवरे मनहुँ कमल हिम मारे ॥
सुनहु पथिक, जो राम मिलहिं बन कहियो मातु सँदेसो ।
'तुलसी' मोहिं और सबहिन तें इन्हको बड़ो अँदेसो ॥

राघौ गीध गोद करि लीन्हों ।
नयन-सरोज सनेह सलिल सुचि मनहु अरघ जल दीन्हों ॥१॥
सुनहु, लषन ! खगपतिहि मिले बन मै पितु-मरन न जान्यौ ।
सहि न सक्यौ सो कठिन बिधाता, बड़ो पछु आजुहि भान्यौ ॥२॥
बहु बिधि राम कह्यौ तनु राखन, परम धीर नहिं डोल्यौ ।
रोकि प्रेम, अवलोकि बदन बिधु, बचन मनोहर बोल्यौ ॥३॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौ ।
जाको नाम मरत मुनि दुरलभ तुमहि कहाँ पुनि पैहौ ॥४॥

प्रेम-पट पाँवड़े देत, सुअरघ बिलोचन-बारि।
आस्रम लै दिये आसन पकज-पाँय पखारि॥
पद-पकजात पखारि पूजे, पथ-श्रम-बिरहित भये।
फल फूल अकुर-मूल धरे सुधारि भरि दोना नये॥
प्रभु खात पुलकित गात, स्वाद सराहि आदर जनु जये।
फल चारिहू फल चारि दहि, परचारि-फल सबरी दये॥१॥

सुमन बरषि हरषे सुर, मुनि मुदित सराहि सिहात।
केहि रुचि केहि छुधा सानुज माँगि माँगि प्रभु खात॥
प्रभु खात माँगत, देति सबरी, राम भोगी जाग के।
पुलकत प्रससत सिद्ध-सिव-सनकादि भाजन भाग के॥
बालक सुमित्रा कौसिला के पाहुने फल-साग के।
सुनि समुझि तुलसी जानु रामहिं बस अमल अनुराग के॥

कबहूँ, कपि! राघव आवहिंगे?
मेरे नयन चकोर प्रीतिबस राका ससि मुख दिखरावहिंगे॥१॥
मधुप, मराल, मोर, चातक ह्वै लोचन बहु प्रकार धावहिंगे।
अग अग छबि भिन्न भिन्न सुख निरखि निरखि तहँ तहँ छावहिंगे॥२॥
बिरह-अगिनि जरि रही लता ज्यों, कृपादृष्टि जल पलुहावहिंगे।
निज बियोग-दुख जानि दयानिधि मधुर बचन कहि समुझावहिंगे॥३॥
लोकपाल, सुर, नाग, मनुज सब परे बन्दि कब मुकतावहिंगे।
रावन बध रघुनाथ-बिमल-जस नारदादि मुनिजन गावहिंगे॥४॥
यह अभिलाष रैन दिन मेरे, राज बिभीषन कब पावहिंगे।
तुलसिदास प्रभु मोह जनित भ्रम, भेद बुद्धि कब बिसरावहिंगे॥५॥

रावन ! जु पै राम रन रोषे ।
को सहि सकै सुरासुर समरथ, बिसिष काल-दसननि तें चोषे ॥१॥
तपबल, भुजबल, कै सनेह-बल सिव-बिरचि नीकी बिधि तोषे ।
सो फल राज समाज-सुवन-जन आपुन नास आपने पोषे ॥२॥
तुला पिनाक, साहु नृप, त्रिभुवन भट बटोरि सब के बल जोषे ।
परसुराम-से सूर-सिरोमनि पल में भये खेत के धोषे ॥३॥
कालि की बात बालि की सुधि करि समुझि हिताहित खोलि झरोखे ।
कह्यो कुमन्त्रिन को न मानिये, बड़ी हानि, जिय जानि त्रिदोषे ॥४॥
जासु प्रसाद जनमि जग पुरषनि सागर सृजे, खने अरु सोखे ।
तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो, नयन बीस मंदिर के-से मोखे ॥५॥

तुम्हरे बिरह भई गति जौन ।
चित दै सुनहु, राम करुनानिधि ! जानौं कछु, पै सकौं कहि हौं न ॥१॥
लोचन-नीर कृपिन के धन ज्यों रहत निरन्तर लोचनन-कोन ।
'हा' धुनि-खगी लाज-पिंजरी महँ राखि हिये बडे बधिक हठि मौन ॥२॥
जेहि बाटिका बसति, तहँ खग-मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन ।
स्वास-समीर भेंट भइ भोरेहु, तेहि मग पगु न धर्‌यो तिहु पौन ॥३॥
तुलसिदास प्रभु ! दसा सीय की मुख करि कहत होति अति गौन ।
दीजै दरस, दूरि कीजै दुख, हौ तुम्ह आरत-आरति-दौन ॥४॥

पदपदुम गरीबनिवाज के ।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन-फल हित सुर-साधु-समाज के ॥१॥
गई बहोर, ओर निरबाहक, साजक बिगरे साज के ।
सबरी-सुखद, गीध-गतिदायक, समन सोक कपिराज के ॥२॥
नाहिन मोहि और कतहू कछु, जैसे काग जहाज के ।
आयो सरन सुखद पदपंकज चोंथे रावन बाज के ॥३॥

आरतिहरन सरन, समरथ सब दिन अपने की लाज के।
तुलसी 'पाहि' कहत नत-पालक मोहु से निपट निकाज के ॥४॥

गये राम सरन सबको भलो।
गनी-गरीब, बड़ो छोटो, बुध-मूढ, हीन बल-अति बलो ॥१॥
पगु-अध, निरगुनी-निसबल, जो न लहै जाँचे जलो।
सो निबह्यो नीके, जो जनमि जग राम-राजमारग चलो ॥२॥
नाम-प्रताप-दिवाकर-कर खर गरत तुहिन ज्यों कलिमलो।
सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल-सो खलो ॥३॥
प्रभुपद प्रेम प्रनाम-कामतरु सद्य बिभीषन को फलो।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मगलमय नभ-जल-थलो ॥४॥

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बधु बाहु बिनु करौ भरोसो काको ॥१॥
सुनु, सुग्रीव ' साँचेहू मोपर फेर्‍यो बदन बिधाता।
ऐसे समय समर-सकट हौ तज्यो लखन-सो भ्राता ॥२॥
गिरि, कानन जैहै साखामृग, हौ पुनि अनुज सँघाती।
ह्वै है कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ॥३॥
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि सकल बिकल हिय हारे।
जामवत हनुमत बोलि तब, औसर जानि प्रचारे ॥४॥

जौ हौ अब अनुसासन पावौ।
तौ चद्रमहिं निचोरि चैल-ज्यौ, आनि सुधा सिर नावौ ॥१॥
कै पाताल दलौ ब्यालावलि, अमृत-कुड महि लावौ।
भेदि भुवन, करि भानु बाहिरो तुरत राहु दै तावौ ॥२॥

बिबुध-बैद बरबस आनौं धरि, तौ प्रभु-अनुग कहावौं ।
पटकौं मीच नीच मूषक-ज्यों, सबहिं को पापु बहावौं ॥३॥
तुम्हरिहि कृपा, प्रताप तिहारेहि नेकु बिलब न लावौं ।
दीजै सोइ आयसु तुलसी-प्रभु, जेहि तुम्हरे मन भावौं ॥४॥

होतो नहि जौ जग जनम भरत को ।
तौ, कपि कहत, कृपान-धार मग चलि आचरत बरत को ? ॥१॥
धीरज धरम धरनिधर-धुरहू तें गुर धुर धरनि धरत को ?
सब सद्‌गुन सनमानि आनि उर, अघ-औगुन निदरत को ? ॥२॥
सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को ?
सृजि निज जस-सुरतरु तुलसी कहँ, अभिमत फरनि फरत को ॥३॥

बैठी सगुन मनावति माता ।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर, कहहु, काग ! फुरि बाता ॥१॥
दूध-भात की दोनी दैहौं, सोने चोंच मढ़ैहौं ।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि राम-लषन उर लैहौं ॥२॥
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी ।
गनक बोलाइ, पाँय परि पूछति प्रेम-मगन मृदुबानी ॥३॥
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो ।
प्रभु-आगमन सुनत तुलसी मनो मीन मरत जल पायो ॥४॥

बन तें आइकै राजा राम भये भुआल ।
मुदित चौदउ भुवन, सब सुख सुखी सब सब काल ॥१॥
मिटे कलुष-कलेस-कुलषन, कपट-कुपथ-कुचाल ।
गये दारिद, दोष दारुन, दंभ दुरित-दुकाल ॥२॥

कामधुक महि, कामतरु तरु, उपल मनिगन लाल ।
नारि-नर तेहि समय सुकृती, भरे भाग सुभाल ॥३॥
बरन - आस्रम - धरमरत, मन बचन बेष मराल ।
राम - सिय - सेवक - सनेही, साधु, सुमुख, रसाल ॥४॥
राम - राज - समाज बरनत सिद्ध - सुर - दिगपाल ।
सुमिरि सो तुलसी अजहु हिय हरष होत बिसाल ॥५॥

साँझ समय रघुबीर-पुरी की सोभा आजु बनी ।
ललित दीपमालिका बिलोकहिं हितकरि अवध धनी ॥१॥
फटिक-भीत-सिखरन पर राजति कचन-दीप-अनी ।
जनु अहिनाथ मिलन आयो मनि-सोभित सहसफनी ॥२॥
प्रति मदिर कलसनि पर आजहि मनि गन दुति अपनी ।
मानहु प्रगटि बिपुल लोहितपुर पठइ दिये अवनी ॥३॥
घर घर मगलचार एक रस हरषित रक-गनी ।
तुलसिदास कल कीरति गावहिं, जो कलिमल समनी ॥४॥

बालक सीय के बिहरत मुदित-मन दोउ भाइ ।
नाम लव कुस राम सिय अनुहरति सुदरताइ ॥१॥
देत मुनि मुनि-सिसु खेलौना, ते लै धरत दुराइ ।
खेल खेलत नृप सिसुन्ह के बालबृ द बोलाइ ॥२॥
भूप - भूषन - बसन - बाहन, राज - साज सजाइ ।
बरन चरम, कृपान सर, धनु-तून लेत बनाइ ॥३॥
दुखी सिय पिय-बिरह तुलसी, सुखी सुत-सुख पाइ ।
आँच पय उफनात, सीचत सलिल ज्यों सकुचाइ ॥४॥

रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावहिं सकल अवधबासी ।
अति उदार अवतार मनुज-बपु धरे ब्रह्म अज अबिनासी ॥१॥
प्रथम ताड़का हति, सुबाहु बधि, मख राख्यो द्विज-हितकारी ।
देखि दुखी अति सिला सापबस रघुपति बिप्रनारि तारी ॥२॥
सब भूपन को गरब हरयो, भज्यो संभु चाप भारी ॥
जनकसुता समेत आवत गृह परसुराम अति मदहारी ॥३॥
तात-बचन तजि राज-काज सुर चित्रकूट मुनिबेष धरयो ।
एक नयन कीन्हों सुरपति सुत, बधि बिराध रिषि-सोक हरयो ॥४॥
पंचबटी पावन राघव करि सूपनखा कुरूप कीन्ही ।
खर-दूषन संहारि कपट-मृग-गीधराज कहँ गति दीन्ही ॥५॥
हति कबंध, सुग्रीव सखा करि, बेधे ताल, बालि मारयो ।
बानर-रीछ सहाय, अनुज सँग सिंधु बाँधि जस बिस्तारयो ॥६॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन मारि अखिल सुर-दुख टारयो ।
परमसाधु जिय जानि बिभीषन लंकापुरी तिलक सारयो ॥७॥
सीता अरु लछिमन सँग लीन्हें औरहु जिते दास आये ।
नगर निकट बिमान आये, सब नर-नारी देखन धाये ॥८॥
सिव-बिरंचि, सुक-नारदादि मुनि अस्तुति करत बिमल बानी ।
चौदह भुवन चराचर हरषित, आये राम राजधानी ॥९॥
मिले भरत, जननी, गुर, परिजन, चाहत परम अनंद भरे ।
दुसह-बियोग-जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ॥१०॥
बेद-पुरान बिचारि लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो ।
तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भगति-दान तब माँगि लियो ॥११॥

—

विविध ग्रन्थों से

हनुमानबाहुक

सिन्धु-तरन सिय-सोच-हरन रवि-बाल-बरन तनु।
भुज बिसाल, मूरति कराल, कालहु को काल जनु॥
गहन-दहन-निरदहन-लङ्क, निःसंक बंक-भुव।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवन सुव॥
कह 'तुलसिदास' सेवत सुलभ, सेवक-हित सतत निकट।
गुन गनत, नमत, सुमिरत, जपत समन सकल-संकट-बिकट॥

दवन-दुवन-दल भुवन बिदित बल,
बेद जस गावत बिबुध-बंदी-छोर को।
पाप-ताप-तिमिर-तुहिन-बिघटन-पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोर को।
लोक परलोक तें बिसोक, सपने न सोक,
'तुलसी' के हिये है भरोसो एक ओर को।
राम को दुलारो दास बामदेव को निवास,
नाम कलिकामतरु केसरी-किसोर को॥

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिये।
सेवा-जोग 'तुलसी' कबहुँ ? कहाँ चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेब सँभारिये॥

अपराधी जानि कीजै साँसति सहस भाँति,
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिये।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीर जू के,
बाँह पीर महाबीर बेगि ही निवारिये॥

रामगुलाम तुही हनुमान गुसाईं सुसाईं सदा अनुकूलो।
पाल्यो हौ बाल ज्यों आखर दू पितु मातु ज्यों मङ्गल मोद समूलो॥
बाँह की बेदन, बाँह पगार! पुकारत आरत आनँद-भूलो।
श्री रघुबीर निवारिय पीर, रहौं दरबार परो लटि लूलो॥

कहौं हनुमान सों, सुजान रामराय सों,
कृपानिधान संकर सों, सावधान सुनिये।
हरष-विषाद-राग रोष-गुन-दोषमई,
बिरची बिरचि सब देखियतु दुनिये॥
माया जीव काल के, करम के सुभाय के,
करैया राम, वेद कहै, साँची मन गुनिये।
तुमतें कहा न होय, हाहा! सो बुझैये मोहि,
हौंहूँ रहौं मौन ही, बयो सो जानि लुनिये॥

श्रीकृष्ण गीतावली

माता लै उछङ्ग गोबिंद मुख बार बार निरखै।
पुलकित तनु आनदघन छन छन मन हरषै॥
पूछत तोतरात बात मातहिं जदुराई।
अतिसय सुख जातें तोहि मोहिं कहु समुझाई॥
देखत तव बदन-कमल मन अनद होई।
कहै कौन रसन मौन जानै कोइ कोई॥

सुन्दर मुख मोहिं देखाव, इच्छा अति मोरे।
मम समान पुन्यपुंज बालक नहिं तोरे॥
'तुलसी' प्रभु प्रेमबस्य मनुज-रूपधारी।
बाल केलि लीलारस ब्रज-जन-हितकारी॥

आजु उनींदे आये मुरारी।
आलसवंत सुभग-लोचन सखि छिन मूँदत, छिन देत उघारी॥
मनहुँ इंदु पर खंजरीट दोउ कछुक अरुन बिधि रचे सँवारी।
कुटिल अलक जनु मार फंद कर गहे सजग ह्वै रह्यो सँभारी॥
मनहुँ उड़न चाहत अति चंचल पलक पंख छिन देत पसारी।
नासिक कीर, बचन पिक सुनि करि संगति मनु गुनि रहति बिचारी॥
रुचिर कपोल, चारु कुंडल बर, भ्रुकुटि सरासन की अनुहारी।
परम चपल तेहि त्रास मनहुँ खग प्रगटत दुरत न मानत हारी॥
जदुपति मुखछबि कलप कोटि लगि कहि न जाइ जाके मुख चारी।
'तुलसिदास' जेहि निरखि ग्वालिनी भजीं तात पति तनय बिसारी॥

ऊधो या ब्रज की दसा बिचारो।
ता पाछे यह सिद्धि आपनी जोग-कथा बिस्तारो॥
जा कारन पठये तुम माधव सो सोचहु मनमाहीं।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं?॥
परम चतुर निज दास स्याम के संतत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा कहत हौ!॥
वह अति ललित मनोहर आनन कौने जतन बिसारौं।
जोग जुगुति अरु मुकुति बिबिध बिधि वा मुरली पर वारौं॥
जेहि उर बसत स्यामसुंदर घन तेहि निर्गुन कस आवै।
'तुलसिदास' सो भजन बहावो जाहि दूसरो भावै॥

मधुकर कहहु कहन जो पारो ।
नाहिंन, बलि, अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ॥
नहिं तुम ब्रज बसि नंदलाल को बालबिनोद निहारो ।
नाहिंन रास रसिक रस चाख्यो, तातें डेल सो डारो ॥
'तुलसी' जौ न गये प्रीतम सँग प्रान त्यागि तनु न्यारो ।
तौ सुनिबो देखिबो बहुत अब, कहा करम सों चारो ॥

सब मिलि साहस करिय सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पाँय परि कान्ह कूबरी रानी ॥
बसैं सुबास, सुपास होहि सब फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिं सुख-जीवन खुलहि मोद-मनि खानी ॥
तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर बानी ।
देखिबो दरस दूसरेहु चौथेहु बड़ो लाभ, लघु हानी ॥
पावक परत निषिद्ध लाकरी होति अनल जग जानी ।
'तुलसी' सो तिहुँ भुवन गाइबी नंद सुवन सनमानी ॥

मधुप ! समुझि देखहु मनमाहीं ॥
प्रेम पियूष रूप उडुपति बिनु कैसे हौं अलि पैयत रबि पाहीं ॥
जद्यपि तुम हित लागि कहत सुनि स्रवन बचन नहिं हृदय समाहीं ।
मिलहिं न पावक महँ तुषार कन जौ खोजत सत कलप सिराहीं ॥
तुम कहि रहे, हमहुँ पचिहारी, लोचन हठी तजत हठ नाहीं ।
'तुलसिदास' सोइ जतन करहु कछु बारक स्याम इहाँ फिर जाहीं ॥

मोको अब नयन भये रिपु माई ।
हरि-बियोग तनु तजेहि परमसुख ये राखहि सोइ है बरियाई ।

बरु मन कियो बहुत हित मेरो बारहिबार काम दव लाई।
बरषि नीर ये तबहिं बुझावहिं स्वारथ निपुन अधिक चतुराई॥
ज्ञान परसु दै मधुप पठायो बिरह बेलि कैसेहु कठिनाई।
सो थाक्यो बरह्यों एकहि तक देखत इनकी सहज सिंचाई॥
हारत हू न हारि मानत, सखि, सठ सुभाव कदुक की नाई।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे समुझत नहिं उन्हकी निठुराई॥
ए हठ निरत दरस लालच बस परे जहाँ बुधि बल न बसाई।
'तुलसिदास' इन्ह पर जो द्रवहिं हरि तौ पुनि मिलौ बैरु बिसराई॥

रामाज्ञा-प्रश्न

तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरि लखनु हनुमान।
काजु बिचारेहु सो करहु, दिनु दिनु बड़ कल्यान॥

कौसल्या पद नाइ सिरु, सुमिरि सुमित्रा पाय।
करहु काज मगल कुसल, बिधि हरि सभु सहाय॥

भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहि सुमगल साथ॥

बिटप बेलि फूलहिं फलहिं, जल थल बिमल बिसेखि।
मुदित किरात बिहग मृग, मगल-मूरति देखि॥

सगुन सकल-संकट समन, चित्रकूट चलि जाहु।
सीताराम-प्रसाद सुभ, लघु साधन बड़ लाहु॥

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम।
सगुन सुमंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम॥

सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमगल जानु।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहिं आनु॥

सुमिरि सत्रुसूदन चरन, चलहु करहु सब काज।
सत्रु पराजय निज बिजय, सगुन सुमगल साज॥

भरत नाम सुमिरत मिटहिं, कपट कलेस कुचालि।
नीति प्रीति परतीति हित, सगुन सुमगल सालि॥

राम नामु कलि कामतरु, सकल सुमगल-कद।
सुमिरत करतल सिद्धि जग, पग-पग परमानन्द॥

सीता चरन प्रनामु करि, सुमिरि सुनामु सनेम।
सुतिय होहिं पतिदेवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम॥

लखन ललित मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह।
सुख सपति कीरति बिजय, सगुन सुमगल गेह॥

अनुदिन अवध बधावने, नित नव मगल मोद।
मुदित मातु पितु लोग लखि, रघुबर बालविनोद॥

ललित लाहु लोने लखनु, लोयन-लाहु निहारि।
सुत ललाम लालहु ललित, लेहु ललकि फल चारि॥

गौतमतिय-तारन चरन-कमल आनि उर देखु।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु॥

रामनाम कलि कामतरु, राम भगति सुर धेनु।
सगुन सुमगल मूल जग, गुरु-पद-पकज रेनु॥

सेवक पाल कृपाल चित, रविकुल कैरव चन्द।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, पग पग परमानन्द॥

रामनाम रति नाम गति, राम नाम बिस्वास।
सुमिरत सुभ मगल कुसल, तुलसी तुलसीदास॥

दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान।
धरनि धाम धन धरम सुख, सुत गुन-रूपनिधान॥

पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम।
सुलभ सिद्धि सब सगुन सुभ, सुमिरत सीताराम॥

पार्वती-मंगल

कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्हकर।
लीन्ह जाइ जगजननि जनमु जिन्हके घर॥
मगल खानि भवानि प्रगट जब तें भइ।
तब तें रिधि सिधि सपति गिरिगृह नित नइ॥

सुन्दर गौर सरीर भूति भलि सोहइ।
लोचन भाल बिसाल बदनु मनु मोहइ॥
सैल कुमारि निहारि मनोहर मूरति।
सजल नयन हिय हरषु पुलक तनु पूरति॥

पुनि पुनि करै प्रनामु, न आवत कछु कहि।
"देखौ सपन कि सौतुख ससिसेखर, सहि!"
जैसे जनमदरिद्र महामनि पावइ।
पेखत प्रगट प्रभाउ प्रतीति न आवइ॥

सफल मनोरथ भयउ, गौरि सोहइ सुठि।
घर तें खेलन मनहुँ अबहिं आई उठि॥
देखि रूप अनुराग महेसु भये बस।
कहत बचन जनु सानि सनेह-सुधा-रस॥

हमहिं आजु लगि कनउड़ काहु न कीन्हेउ।
पारबती! तप प्रेम मोल मोहिं लीन्हेउ॥
अब जो कहहु सो करउँ बिलब न यहि घरि।
सुनि महेस मृदु बचन पुलकि पाँयन परि॥

बड़ बिनोदु मग मोदु न कछु कहि आवत।
जाइ नगर निअरानि बरात बजावत॥
पुर खरभर, उर हरषेउ अचलु-अखडलु।
परब उदधि उमगेउ जनु लखि बिधु मंडलु॥

दीन्ह जाइ जनवास सुपास किये सब।
घर घर बालक बात कहन लागे तब॥
"प्रेत बैताल बराती, भूत भयानक।
बरद चढा बर बाउर, सबइ सुबानक॥

थापि अनल हरबरहि बसन पहिरायउ।
आनहु दुलहिन बेगि समउ अब आयउ॥
सखी सुआसिनि सग गौरि सुठि सोहति।
प्रगट रूपमय मूरति जनु जगु मोहति॥

भूषन बसन समय सम सोभा सो भली।
सुखमा बेलि नवल जनु रूप फलनि फली।।
कहहु काहि पटतरिय गौरि गुनरूपहि।
सिंधु कहिय केहि भाँति सरिस सर कूपहि।।

बरु दुलहिनिहि बिलोकि सकल मन रहसहिं।
साखोच्चार समय सब सुर मुनि बिहँसहिं।।
लोक-बेद-बिधि कीन्ह लीन्ह जल कुस कर।
कन्यादान सँकलप कीन्ह धरनीधर।।

पूजे कुल गुर-देव, कलसु सिल सुभ घरी।
लावा होम बिधान बहुरि भाँवरि परी।।
बदन बदि, ग्रथिबिधि करि, धुव देखेउ।
भा बिवाह सब कहहि जनम फल पेखेउ।।

भइ जेवनार बहोरि बुलाइ सकल सुर।
बैठाये गिरिराज धरम-धरनी-धुर।।
परुसन लगे सुआर, बिबुध जन जेंवहिं।
देहि गारि बर नारि मोद मन भेवहिं।।

करहिं सुमगल गान सुघर सहनाइन्ह।
जेइँ चले हरि दुहिन सहित सुर भाइन्ह।।
भूधर भोर बिदाकर साज सजायउ।
चले देव सजि जान निसान बजायउ।।

भेंटि बिदाकरि बहुरि भेंटि पहुँचावहिं।
हुँकरि हुँकरि सु लवाइ धेनु जनु धावहि॥
उमा मातुमुख निरखि नयन जल मोचहिं।
'नारि जनमु जग जाय' सखी कहि सोचहिं॥

रामलला-नहछू

कोटिन बाजन बाजहिं दसरथ के गृह हो।
देवलोक सब देखहिं आनँद अति हिय हो॥
नगर सोहावन लागत बरनि न जातै हो।
कौसल्या के हरष न हृदय समातै हो॥

आले हि बाँस के माँड़व मनिगन पूरन हो।
मोतिन्ह झालर लागि चहूँ दिसि झूलन हो॥
गगाजल कर कलस तौ तुरित मँगाइय हो।
जुवतिन्ह मगल गाइ राम अन्हवाइय हो॥

गजमुकुता हीरा मनि चौक पुराइय हो।
देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइय हो॥
कनक खभ चहुँ ओर मध्य सिंहासन हो।
मानिक दीप बराय बैठि तेहि आसन हो॥

नाउनि अति गुनखानि तौ बेगि बोलाई हो।
करि सिंगार अति लोनि तौ बिहँसति आई हो॥
कनक चुनिन सों लसित नहरनी लिये कर हो।
आनँद हिय न समाइ देखि रामहिं बर हो॥

आज अवधपुर आनँद नहछू राम क हो।
चलहु नयन भरि देखिय सोभाधाम क हो॥
अति बड़ भाग नउनियाँ छुये नख हाथ सों हो।
नैनन्ह करति गुमान तौ श्रीरघुनाथ सों हो॥

बरवै रामायण

सिय मुख सरद कमल जिमि किमि कहि जाइ।
निसि मलीन वह, निसिदिन यह बिगसाइ॥

चंपक हरवा अँग मिलि अधिक सोहाइ।
जानि परै सिय हियरे जब कुँभिलाइ॥

सिय तुव अंग-रग मिलि अधिक उदोत।
हार-बेलि पहिरावउँ चपक होत॥

कुंकुम तिलक भाल, स्रुति कुंडल लोल।
काकपच्छ मिलि सखि कस लसत कपोल॥

भाल तिलक सर, सोहत भौह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चन्द समान॥

तुलसी बंक बिलोकनि, मृदु मुसुकानि।
कस प्रभु नयनकमल अस कहौ बखानि॥

कामरूप सम तुलसी राम सरूप।
को कवि समसरि करै परै भवकूप॥

गरब करहु रघुनंदन जनि मन माँह।
देखउ आपनि मूरति सिय कइ छाँह॥

सजल कठौता कर गहि कहत निषाद।
चढउ नाव पगधोइ करउ जनि बाद॥

डहकु न, है उजियरिया, निसि नहिं घाम।
जगत जरत अस लागु मोहिं बिनु राम॥

अब जीवन कइ हे कपि आस न कोइ।
कनगुरिया कइ मुँदरी कँगना होइ॥

चित्रकूट पयतीर सो सुरतरु-बास।
लखन रामसिय सुमिरहु तुलसीदास॥

पय नहाइ फल खाइ, परिहरिय आस।
सीय - राम - पद सुमिरउ तुलसीदास॥

स्वारथ परमारथ हित एक उपाय।
सीयराम - पद तुलसी प्रेम बढ़ाय॥

काल कराल बिलोकउ होइ सचेत।
रामनाम जपु तुलसी प्रीति समेत॥

संकट सोच बिमोचन, मंगल गेह।
तुलसी रामनाम पर करिय सनेह॥

कलि नहिं ज्ञान, बिराग न जोग समाधि।
रामनाम जपु तुलसी नित निरुपाधि॥

माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम॥

तप, तीरथ, मख, दान, नेम, उपवास।
सब तें अधिक राम जपु तुलसीदास॥

नाम भरोस, नाम बल, नाम सनेहु।
जनम जनम रघुनंदन तुलसिहि देहु॥

वैराग्य-संदीपिनी

तुलसी मिटै न मोहतम, किये कोटि गुनग्राम।
हृदय कमल फूलै नहीं, बिनु रबि-कुल-रबि राम॥

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान।
पाप पुन्य द्वै बीज है, बवै सो लवै निदान॥

तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रयताप।
सांति होइ जब सांतिपद, पावै राम प्रताप॥

सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि।
तुलसी यह मत संत को, बोलै समता माहिं॥

सील गहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिये यहि रहनि, संत जनन को काम॥

सीतल बानी संत की, ससि हू तें अनुमान।
तुलसी कोटि तपनि हरै, जो कोउ धारै कान॥

जाके मन तें उठि गई, तिल तिल तृष्ना चाहि।
मनसा बाचा कर्मना, तुलसी बदत ताहि॥

कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पखान।
तुलसी ऐसे सतजन, पृथिवी ब्रह्म समान॥

आकिंचन, इद्रियदमन, रमन राम इकतार।
तुलसी ऐसे संतजन, बिरले या संसार॥

बिरले बिरले पाइये, माया त्यागी सत।
तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनंत॥

तुलसी जाके बदन तें, धोखेउ निकसति राम।
ताके पग की पगतरी, मेरे तनु को चाम॥

सात द्वीप नव खड लौ, तीनि लोक जग माहिं।
तुलसी सांति समान सुख, अपर दूसरो नाहिं॥

अहकार की अगिनि में, दहत सकल ससार।
तुलसी बाँचै सतजन, केवल सांति अधार॥

सोइ ज्ञानी सोइ गुनी जन, सोई दाता ध्यानि।
तुलसी जाके चित भई, राग द्वेष की हानि॥

विविध ग्रन्थों से

फिरी दोहाई राम की, गे कामादिक भाजि।
तुलसी ज्यों रबि के उदय, तुरत जात तम लाजि॥

जानकी-मंगल

परसि कमलकर सीस, हरषि हिय लावहिं।
प्रेम पयोधि-मगन मुनि, पार न पावहि॥
मधुर मनोहर मूरति सादर चाहहिं।
बार बार दसरथ के सुकृत सराहहि॥

बिप्र साधु सुर काज महामुनि मन धरि।
रामहिं चले लिवाइ धनुष मख मिसु करि॥
गौतमनारि उधारि पठै पति-धामहिं।
जनक नगर लै गयउ महामुनि रामहिं॥

राजत राजसमाज जुगल रघुकुल मनि।
मनहुँ सरदबिधु उभय, नखत धरनी धनि॥
काकपच्छ सिर, सुभग सरोरुह लोचन।
गौर स्याम सत-कोटि-काम-मद-मोचन॥

तिलकु ललित सर भृकुटी काम कमानै।
स्रवन बिभूषन रुचिर देखि मन मानै॥
नासा चिबुक कपोल अधर रद सुंदर।
बदन सरद-बिधु-निंदक सहज मनोहर॥

उर बिसाल वृषकंध सुभग भुज अति बल ।
पीत बसन उपवीत, कंठ मुकुताफल ॥
कटि निखंग, कर कमलन्हि धरे धनुसायक ।
सकल अंग मनमोहन जोहन लायक ॥

राम-लखन-छबि देखि मगन भये पुरजन ।
उर आनँद, जल लोचन, प्रेम पुलक तन ॥
नारि परस्पर कहहिं देखि दुहुँ भाइन्ह ।
'लहेउ' जनम फल आजु जनमि जग आइन्ह ॥

गये सुभाय राम जब चाप समीपहि ।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपति ॥
कहि न सकति कछु सकुचनि, सिय हिय सोचइ ।
गौरि गनेस गिरीसहिं सुमिरि सकोचइ ॥

अंतरजामी राम मरम सब जानेउ ।
धनु चढाइ कौतुकहिं कान लगि तानेउ ॥
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भंजेउ ।
जनु मृगराज-किसोर महा गज गंजेउ ॥

नियरानि नगर बरात हरषी लेन अगवानी गये ।
देखत परस्पर मिलत, मानत, प्रेम परिपूरन भये ॥
आनंद पुर कौतुक कोलाहल बनत सो बरनत कहाँ ।
लै दियो तहँ जनवास सकल सुपास नितनूतन जहाँ ॥

चले सुमिरि गुरु सुर सुमन बरषहिं, परे बहु बिधि पाँवड़े ।
सनमानि सब बिधि जनक दसरथ किये प्रेम कनावड़े ॥

गुन सकल सम समधी परस्पर मिलत अति आनँद लहे ।
जय धन्य जय जय धन्य धन्य बिलोकि सुर नर मुनि कहे ॥

लै लै नाउँ सुआसिनि मगल गावहि ।
कुँवर कुँवरि हित गनपति गौरि पुजावहिं ॥
अगिनि थापि मिथिलेस कुसोदक लीन्हेउ ।
कन्यादान बिधान सकलप कीन्हेउ ॥

सकलपि सिय रामहि समरपी सील सुख सोभामई ।
जिमि सकरहि गिरिराज गिरिजा, हरिहि श्री सागर दई ॥
सिदूर बदन होम लावा होन लागी भाँवरी ।
सिलपोहनी करि मोहनी मन हर्यौ मूरति साँवरी ॥

जनक अनुज-तनया दुइ परम मनोरम ।
जेठि भरत कहँ ब्याहि रूप रति सय सम ॥
सिय लघु भगिनि लखन कहँ रूप-उजागरि ।
लखन-अनुज श्रुतिकीरति सब-गुन-आगरि ॥

राम बिबाह समान ब्याह तीनिउ भये ।
जीवनफल, लोचनफल बिधि सब कहँ दये ॥
दाइज भयउ बिबिध बिध जाइ न सो गनि ।
दासी, दास, बाजि, गज, हेम, बसन, मनि ॥

सासु उतारि आरती करहिं निछावरि ।
निरखि निरखि हिय हरषहि मूरति साँवरि ॥
माँगेउ बिदा राम तब, सुनि करुना भरी ।
परिहरि सकुच सप्रेम पुलकि पायन्ह परी ॥

सीय सहित सब सुता सौंपि कर जोरहि।
बार बार रघुनाथहिं निरखि निहोरहि॥
"तात तजिय जनि छोह मया राखवि मन।
अनुचर जानब राउ सहित पुर परिजन॥"

बधुन्ह सहित सुत चारिउ मातु निहारहिं।
बारहिं बार आरती मुदित उतारहिं॥
करहि निछावरि छिनु छिनु मगल मुद भरी।
दूलह दुलहिनिन्ह देखि प्रेम-पय-निधि परी॥

देत पाँवड़े अरघु चलीं लइ सादर।
उमँगि चलेउ आनंद भुवन भुइँ बादर॥
नारि उहार उघारि दुलहिनिन्ह देखहिं।
नैन लाहु लहि जनम सफल करि लेखहिं॥

भवन आनि सनमानि सकल मंगल किये।
बसन कनक मनि धेनु दान बिप्रन्ह दिये॥
जाचक कीन्ह निहाल असीसहि जहँ तहँ।
पूजे देव पितर सब राम उदय कहँ॥

नेग चार करि दीन्ह सबहिं पहिरावनि।
समधी सकल सुआसिनि गुरुतिय पावनि॥
जोरी चारि निहारि असीसत निकसहिं।
मनहुँ कुमुद बिधु-उदय मुदित मन बिकसहिं॥